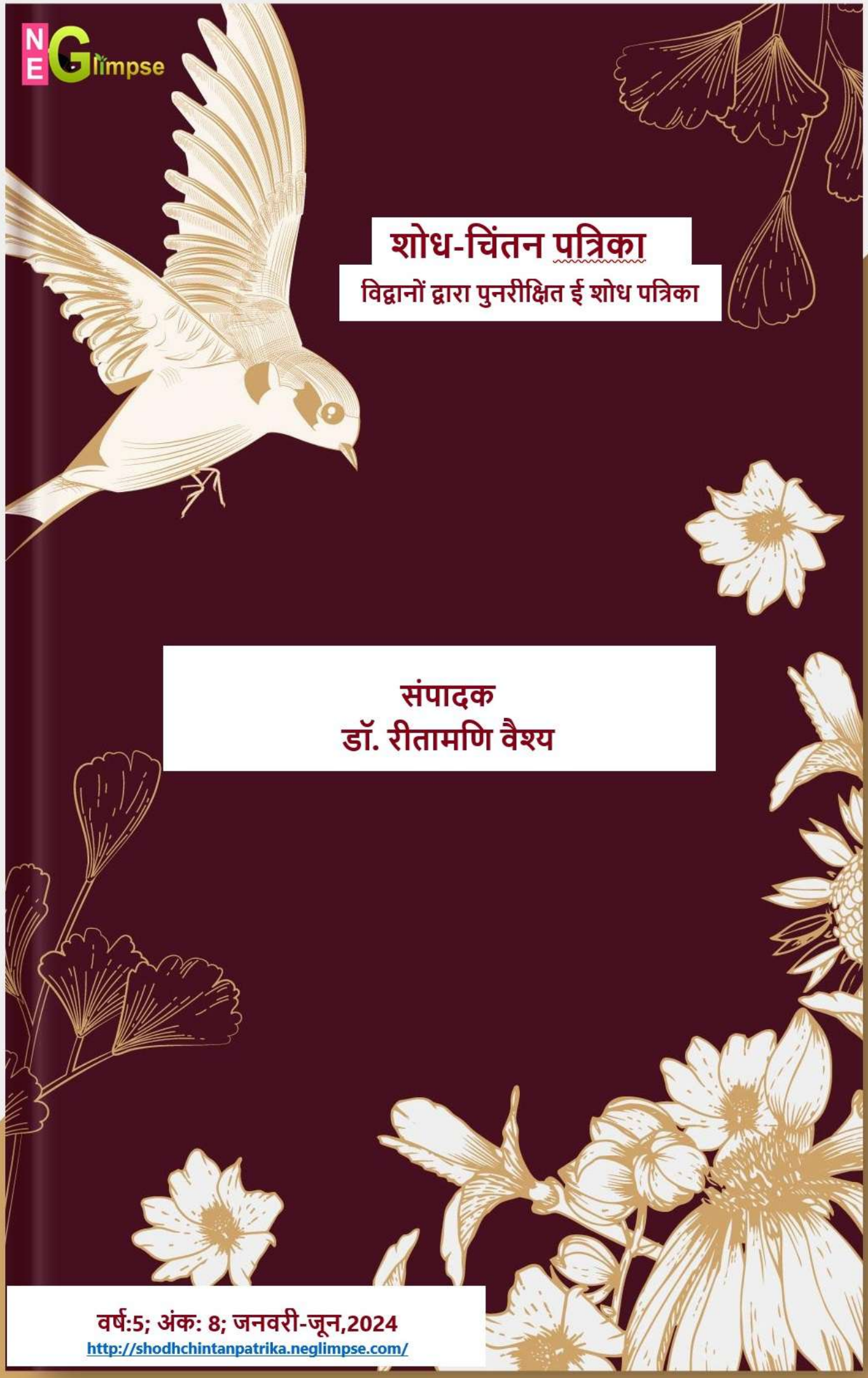

शोध-चिंतन पत्रिका

विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका

संपादक
डॉ. रीतामणि वैश्य

वर्ष:5; अंक: 8; जनवरी-जून,2024
http://shodhchintanpatrika.neglimpse.com/

शोध- चिंतन पत्रिका

विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका

संपादक

डॉ. रीतामणि वैश्य

E-ISSN: 2583-1860

वर्ष:5; अंक: 8; जनवरी-जून,2024

प्रकाशक : NEGLIMPSE

E-ISSN: 2583-1860

संपर्क सूत्र :

ई-मेइल : **shodhchintan@gmail.com**

मोबाइल नं. 8135054304

8486316810

9435116133

7002272818

संरक्षक

डॉ. किरण हाजरिका
अध्यक्ष, टेङाखात महाविद्यालय
डिब्रुगड़

डॉ. अमूल्य वर्मण
पूर्व विभागाध्यक्ष तथा सहयोगी प्राध्यापक
हिंदी विभाग, कॉटन कॉलेज

परामर्श मंडल

प्रो. एइच सुबदनी देवी
हिंदी विभाग, मणिपुर विश्वविद्यालय

प्रो. दिनेश कुमार चौबे
हिंदी विभाग, पूर्वोत्तर पहाड़ीय विश्वविद्यालय

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

डॉ. नारायण चंद्र तालुकदार
पूर्व विभागाध्यक्ष तथा सहयोगी प्राध्यापकहिंदी विभाग, कॉटन महाविद्यालय

डॉ. अच्युत शर्मा
भूतपूर्व सहयोगी प्राध्यापक
हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय

प्रो. रवीन्द्रनाथ मिश्र
हिन्दी विभाग, विश्व भारती विश्वविद्यालय

डॉ. पवन कुमार
सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग, गवमेंट डिग्री कॉलेज ऑफ भैंसा

डॉ. माक्सीम देमचेन्को
सहयोगी अध्यापक, मॉस्को स्टेट लिंग्विस्टिक विश्वविद्यालय, मॉस्को (रूस)

प्रो. निरंजन कुमार
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

डॉ. राहुल मिश्र
प्राध्यापक, हिंदी
केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान (मानद विश्वविद्यालय)

डॉ. गोलोक चंद्र डेका
सहायक अध्यापक
हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय

डॉ. लेखा एम.
सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग, एन एस एस हिंदू महाविद्यालय

संपादक

डॉ. रीतामणि वैश्य
सह आचार्य, हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम
rita1@gauhati.ac.in
9101452787, 9435116133
Profile Link: https://www.gauhati.ac.in/academic/arts/hindi

संपादक मंडल

प्रो. जय कौशल
आचार्य, हिंदी विभाग
असम विश्वविद्यालय (दीफू परिसर), असम
jai.kaushal@aus.ac.in
9612091397

डॉ. मिलन रानी जमातिया
आचार्य, हिंदी विभाग
त्रिपुरा विश्वविद्यालय, सूर्यमणि नगर, अगरतला,
त्रिपुरा वेस्ट, 799022
milanrani08@tripurauniv.ac.in
8974009245

डॉ. चुकी भूटिया
सह आचार्य, हिंदी विभाग, काजीरोड,
सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम,737102
cbhutia01@cus.ac.in
9064224852

प्रो. पूनम कुमारी
आचार्य,हिंदी / भारतीय भाषा केंद्र, जे. एन. यू.
punamkumari@mail.jnu.ac.in

डॉ. प्रीति वैश्य
सह आचार्य, हिंदी विभाग
प्रागज्योतिष महाविद्यालय, गुवाहाटी,
pritibaishya @pragiyotishcollege.ac.in
781009 9678885119

डॉ. फिल्मेका मारबानियांग
सह आचार्य
हिंदी विभाग, सेंट एन्थोनीज कॉलेज
शिलांग, मेघालय
fmarbaniang12@anthonys.ac.in
9436302106

डॉ जोरम बानिया ताना
सह आचार्य
हिंदी विभाग, देरानातुंग गवर्मेंट कॉलेज
इटानगर, अरुणाचल प्रदेश
aniya@dngc.ac.in
7005147047

संपादकीय

आदिवासी समाज और विकास

वर्तमान समय में उभरे तमाम विमर्शों में अन्यतम है आदिवासी विमर्श। भारत के कई राज्यों में आदिवासी समुदाय मिलते हैं और ये अच्छी संख्या में मिलते हैं। ओडिशा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, झारखण्ड, अंडमान-निकोबार, सिक्किम, त्रिपुरा, मणिपुर, मिज़ोरम, मेघालय, नागालैंड और असम में आदिवासी बहुसंख्यक हैं; जबकि गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में यह अल्पसंख्यक हैं। कुल मिलाकर सच्चाई यह है कि भारत की आबादी में आदिवासियों की अच्छी-ख़ासी हिस्सेदारी है।

आदिवासी का समाज गैर-आदिवासी समाज से कई अर्थों में भिन्न होता है। इस समाज के लोग कथित सभ्यता से कुछ दूर होते हैं। बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि आदिवासियों की अपनी सभ्यता होती है, अपनी संस्कृति होती है, अपनी समाज-व्यवस्था होती है, अपने रीति-रिवाज होते हैं और तमाम विशेषताओं से वे शेष समाज से विशेष होते हैं। उनकी सामूहिकता उन्हें और विशिष्ट बनाती है। वे आधुनिक सुख-सुविधाओं से दूर होते हुए भी अत्यंत खुश रहते हैं। उनके जीवन की अपनी ही मान्यताएँ हैं, जिन्हें वे जीते हैं और जिंदा रखते हैं।

आदिवासी प्रकृति के अभिन्न अंग होते हैं। पशु-पक्षियों के साथ ही वे सूरज के उगते ही उठ जाते हैं, फिर अपनी दिनचर्या का पालन करते हुए सूरज के ढलने के साथ वे भी नींद की गोद में सो जाते हैं। जल,जंगल और जमीन उनके जीवन के आधार होते हैं। वे प्रकृति से और प्रकृति उनसे होती है। वे प्रकृति के एक-एक उपादानों की पूजा करते हैं। वैसे तो आर्य समाज में भी प्रकृति की पूजा करने की प्रवृत्ति अवश्य है,पर आदिवासियों में यह प्रवृत्ति कुछ अधिक देखी जाती है। नदी,पहाड़,पर्वत, पशु,पक्षी सब उनके पूज्य होते हैं। प्रकृति के साथ सहवास करने की आदिम प्रवृत्ति को उसने अभी छोड़ा नहीं है। इसीलिए अभी भी आदिवासी शिशुओं के नाम पशु-पक्षी के रखे जाते हैं। उनमें साँप, नेवला आदि नाम आसानी से मिल जाते हैं। बात अज्ञेय की 'साँप' कविता के गूढ़ार्थ की ओर इशारा करती है। साँप जब जंगल से बाहर निकलता है, तभी उसमें जहर उगलने की प्रवृत्ति विकसित होती है। डँसने की चतुरता उसे शहर में मिलती है। जब वह जंगल में रहता है, वह शांत और शील रहता है। इसी से आदिवासी अपने बच्चों के नाम प्यार से साँप रखते हैं। पशु-पक्षियों पर शिशुओं के नाम रखने के इस तर्क के दम को नकारा नहीं जा सकता । यही कारण है कि शेष

दुनिया में जब सूअर एक गाली होती है, वहीं आदिवासी समाज में वह सुंदरता का पर्याय होता है। साहित्य में चाँद,तारे,कमल आदि नायिका की सुंदरता के प्रतिमान हैं और आदिवासी समाज की नायिका की चंचलता का प्रतिमान सूअर की चपलता है।

भारत के नागरिक होने के कारण आदिवासी लोगों को भी जीने का और जीने के साधनों के उपयोग करने का उतना ही अधिकार है, जितना गैर-आदिवासियों का है। इक्कीसवीं सदी में भारत दुनिया के अन्य उन्नत देशों के साथ होड़ लगाने की क्षमता रख रहा है। भारत का शहर-शहर, गाँव-गाँव का चप्पा-चप्पा विकास की किरणों से आलोकित होने लगा है । तब क्यों विकास की धारा से आदिवासी वंचित रह जाएँ? आदिवासी समाज का पढ़ा-लिखा नौजवान भी अपने समाज को विकसित रूप में देखना चाहता है और विकास के इस क्रम में वह अपनी भूमिका अदा करना चाहता है।

और विरोधाभास वहीं शुरू होता है। जहाँ आदिवासी बसते हैं, अक्सर वह पिछड़ा हुआ और दुर्गम क्षेत्र होता है। इन क्षेत्रों से कुछ लोग तो निकल जाते हैं, पर जिनसे यह संभव नहीं हो पाता है, वहाँ विकास को उन क्षेत्रों तक अपना रास्ता तय करना पड़ता है। उन क्षेत्रों के विकास की पहली सीढ़ी है सड़क। जब बड़ी-बड़ी सड़कें बनती हैं, गली-गली तक आसानी से वाहन ले जाने के लिए रास्ते बनते हैं, तब बहुत सारे पेड़-पौधे काटने पड़ते हैं,पहाड़ियों के बीच से रास्ते निकालने पड़ते हैं। रेल लाइन ,रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डे बनाने पड़ते हैं। स्कूल,कॉलेज, ऑफिस की सैकड़ों बिल्डिंग का निर्माण करना पड़ता है। मोबाइल के टावर बैठाने होते हैं, इन्टरनेट का संयोग करना पड़ता है। इन्हीं सबके चलते शेष दुनिया की सारी प्रवृत्तियाँ आदिवासी समाज में प्रवेश कर जाती हैं। लोगों की रुचि बदलने लगती है और इसका सीधा असर संस्कृति और साहित्य पर पड़ता है।

आज के युग में आदिवासियों का विकास होना चाहिए और हो रहा है। इसके साथ ही इस बात का ध्यान भी रखना चाहिए कि आदिवासी समाज का संरक्षण भी हों। दोनों में तालमेल बनाकर रखना बहुत ही मुश्किल है,पर ऐसा करने का कोई विकल्प भी नहीं है। कम से कम जल,जंगल और जमीन का उपयोग किए बिना विकास की प्रक्रिया चलायी जानी चाहिए। साथ ही आदिवासी मौखिक साहित्य के संरक्षण पर भी ज़ोर देना समय की मांग है।

डॉ. रीतामणि वैश्य

संपादक

शोध-चिंतन पत्रिका

वर्ष:5; अंक: 8; जनवरी-जून,2024

इस अंक में

	आलेख	नाम	पृष्ठ संख्या
1	नव वैष्णव आंदोलन : एकशरण नाम धर्म के विशेष संदर्भ में	डॉ॰ जशोधरा बोरा	1-11
2	भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना में डॉ॰ भीमराव अंबेडकर की भूमिका	अब्दुल्लाह क़ुरैशी	12-23
3	हिंदी काव्य में आदिवासी जीवन दर्शन	डिम्पी बरगोहाँई	24-32
4	अज्ञेय की राजनीतिक आन्दोलन सम्बंधी कहानियाँ : एक अवलोकन	गीतांजलि दास	33-39
5	भूपेन हाजरिका के गीतों में आत्मनिर्भरता की चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	पूजा बरुवा	40-48
6	'मुझे पहचानो' : लांछित कुलदेवी और जीवित सती की दास्तान	डॉ. संजीव मंडल	49-60
7	अनवर सुहैल कृत 'उम्मीद बाक़ी है अभी' में अभिव्यक्त उत्तर-आधुनिक विमर्श	अरशदा रिज़वी प्रो॰ नवीन चन्द्र लोहनी	61-75
8	तात्त्विक दृष्टि से 'अंधायुग' गीति-नाट्य का समीक्षात्मक अध्ययन	डॉ॰ सिराजुल हक	76-92

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 01-11

नव वैष्णव आंदोलन : एकशरण नाम धर्म के विशेष संदर्भ में

डॉ. जशोधरा बोरा

शोध-सार :

एकशरण नाम धर्म एक नव-वैष्णव आंदोलन है जिसे 15-16वीं शताब्दी में पूर्वोत्तर भारत में स्थित असम में श्रीमंत शंकरदेव द्वारा प्रवर्तित किया गया था। इसमें विष्णु के प्रति ध्यान केंद्रीत कर, श्रवण, नाम स्मरण और उनके कर्मों को गाने (कीर्तन) आदि पर बल दिया गया है। एकशरण का प्रचार करने वाली संस्थाएँ जैसे सत्र (मठ), नामघर (प्रार्थना घर) का असम की सामाजिक संरचना के विकास में गहरा प्रभाव है। इस आंदोलन से उत्पन्न कलात्मक रचनाओं ने साहित्य, संगीत (बरगीत), नाटक (अंकिया नाट) और नृत्य (सत्रिया नृत्य) के नए रूपों को जन्म दिया है। यह आंदोलन जाति व्यवस्था और हिंदू धर्म के अन्य सम्प्रदायों, विशेषकर शक्तिवाद में पशु बलि के खिलाफ़ रहा है। अपने समतावाद के लिए प्रसिद्ध इसने ब्राह्मणवादी हिंदू धर्म के लिये गंभीर चुनैती पेश की और सभी जातियों, जन-जातियों और धर्म के लोगों को अपने में शामिल कर लिया। यद्यपि एकशरण अवैयक्तिक (निर्गुण) भगवान को स्वीकार करता है, तथापि यह वैयक्तिक (सगुण) को पूजनीय के रूप में पहचानता है। एकमात्र पहलू जो वैयक्तिक को अवैयक्तिक से अलग करता है वह सृजन का कार्य है, जिसके द्वारा नारायण ने सब कुछ बनाया है। नारायण को वैयक्तिक और पूजनीय देवता के रूप में एक प्रेमपूर्ण और प्रिय देवता माना जाता है, जिनके पास शुभ गुण हैं जो भक्तों को आकर्षित करते हैं। वह अद्वैत, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है; सभी का निर्माता, पालनकर्ता और संहारक। उनके पास करुणामय (दयालु), दीनबंधु (नीचों का मित्र), भक्त-वत्सल (भक्तों का प्रिय) और पतित-पावन (पापियों का उद्धारक) जैसे नैतिक गुण भी हैं जो उन्हें भक्तों के लिये आकर्षक बनाते हैं। हालांकि यह अन्य देवताओं के अस्तित्व से इंकार नहीं करता है, लेकिन यह दावा करता है कि अकेले नारायाण ही पूजनीय हैं।

बीज-शब्द : *एकशरण नाम धर्म, नव-वैष्णव आंदोलन, श्रीमंत शंकरदेव, नामघर, बरगीत, अंकिया नाट, सत्रिया नृत्य, निर्गुण, सगुण*

प्रस्तावना :

महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव असम में नव-वैष्णव धर्म के प्रचारक के रूप में सुप्रसिद्ध हैं । आप बहुगुण सम्पन्न कवि, नाटककार, समाज-सुधारक आदि महान व्यक्तित्व से सुशोभित हैं । भक्ति की नई लहर को पूर्वोत्तर भारत में प्रचार करने का आपका योगदान बेजोड़ है। शंकरदेव ने विष्णु के निर्गुण रूप के प्रति ध्यान आकर्षित करते हुए पूर्वोत्तर भारत में 15-16वीं शताब्दी में नव-वैष्णव आंदोलन के अंतर्गत 'एकशरण नाम धर्म' की स्थापना कीं। इसमें विष्णु के प्रति ध्यान केंद्रीत कर, श्रवण, नाम-स्मरण और उनके कर्मों को गाने

(कीर्तन) आदि पर बल दिया गया है। एकशरण का प्रचार करने वाली संस्थाएँ जैसे सत्र (मठ), नामघर (प्रार्थना घर) का असम की सामाजिक संरचना के विकास में गहरा प्रभाव है। इस आंदोलन से उत्पन्न कलात्मक रचनाओं ने साहित्य (ब्रजावली भाषा), संगीत (बरगीत), नाटक (अंकिया नाट) और नृत्य (सत्रिया नृत्य) के नए रूपों को जन्म दिया है।

एकशरण नाम धर्म का महत्त्व

- एकशरण नाम धर्म के द्वारा कलात्मक अभिव्यक्ति का विकास हुआ। शंकरदेव ने भक्ति का संदेश देने और उसे लोगों तक पहुँचाने के लिए गीत, नृत्य और नाटक तैयार किए। इनमें बरगीत, सत्रिया नृत्य, अंकिया नाट आदि आध्यात्मिक कलाएँ शामिल थीं जो लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध थे, जिनके विषय महाकाव्यों और पुराणों से लिए गए थे।
- यह आंदोलन जाति व्यवस्था और हिंदू धर्म के अन्य सम्प्रदायों, विशेषकर शक्तिवाद में पशु बलि के खिलाफ़ रहा है। अपने समतावाद के लिए प्रसिद्ध इसने ब्राह्मणवादी हिंदू धर्म के लिए गंभीर चुनौती पेश की और सभी जातियों, जन-जातियों और धर्म के लोगों को अपने में शामिल कर लिया।
- एकशरण नाम धर्म ने वैदिक अनुष्ठानों पर ध्यान केंद्रित करना कम कर दिया और सामूहिक श्रवण (श्रवण) और उनके नाम और कर्मों को गाने (कीर्तन) के रूप में कृष्ण के प्रति समर्पण (भक्ति) पर ध्यान केंद्रित किया।
- सत्र (मठ) और नामघर (प्रार्थन घर) जैसी एक शरण का प्रचार करने वाली संस्थाओं का असम के सामाजिक ढाँचे के विकास में गहरा प्रभाव था।
- शंकरदेव द्वारा *'कीर्तन-घोषा'* और माधवदेव द्वारा *'नाम-घोषा'* ये पुस्तकें एक शरणीया नाम धर्म को केंद्रित कर सामूहिक गायन के लिए व्यवहार की जाती है।

असम में नव-वैष्णव आंदोलन

असम में 14वीं-15वीं शती में छोटे-छोटे राज्यों के स्थान में दो शक्तिशाली राज्यों का गठन होता है, वे हैं - आहोम राज्य और कोच राज्य। गुवाहाटी से पूर्व दिशा में आहोम राज्य ने और पश्चिम में असम और उत्तर बंगाल के कुछ अंचल में कोच राज्य ने प्रतिष्ठा लाभ किया है। दोनों राज्यों के बीच के संपर्क अच्छे थे। आहोम राज्य के राजाओं ने कभी भी हिंदू धर्म को नहीं अपनाया लेकिन दूसरी तरफ कोच राज्य के राजाओं ने हिंदू धर्म को सिर्फ अपनाया ही नहीं, साथ में हिंदू धर्म का प्रचार एवं प्रसार भी किया। उस समय

में अधिकतर लोग कृषि कार्य के साथ ही जुड़े हुए थे। इन कृषि जीवी लोग जिनमें अधिक संख्यक लोग प्रजा थे, इनको उचित सामाजिक मर्यादा नहीं मिल पा रही थी। इसीलिए यह लोग आध्यात्मिक अथवा धार्मिक मर्यादा के लिए अपेक्षा कर रहे थे, और इसकी संभावना देखी गई नव-वैष्णव आंदोलन में। इसके उपरांत असम के अन्य जाति-जनजाति जैसे कि ब्राह्मण, कायस्थ, कलिता, कछारी आदि के बीच में संपर्क नहीं हो पा रहा था। एक शरणीया वैष्णव धर्म ने इनके बीच संपर्क रखने में सहायता किया।

महापुरुष शंकरदेव ने 15वीं शती के अंतिम भाग में वैष्णव आंदोलन की शुरूआत कीं। शंकरदेव के काल में असम की परिस्थिति विभिन्न उपभाषा, नाना धर्म आदि में उलझे हुए थे। इस बात को महापुरुष शंकरदेव समझ गए थे, साथ ही उनको यह भी पता चल चुका था कि असम में रहनेवाले भिन्न-भिन्न प्रकार के मतावलंबी जन समूह के बीच में संप्रीति, एकता और आध्यात्मिक भाव को जगाने के लिए सहज आचरण के लिए साधन, पंथ अथवा धर्म मार्ग का संधान करना आवश्यक हो गया था। वैष्णव भक्ति मार्ग उस सहज साधन पंथ का स्थान ले सकती है। इसी उद्देश्य से शंकरदेव ने 12 साल का समय लेकर समग्र भारतवर्ष भ्रमण करके विभिन्न तीर्थस्थानों, मठ-मंदिर दर्शन करके विभिन्न वैष्णव संप्रदायों के क्रियाकलापों को निरीक्षण किया, अपने देश, काल और मनुष्य के लिए उपयोगी रूप में वैष्णव भक्ति मार्ग का प्रवर्तन किया। महापुरुष शंकरदेव के द्वारा प्रवर्तित नव-वैष्णव भक्तिमार्ग के प्रधान लक्षण कुछ इस प्रकार थे -

- यह धर्म कृष्ण-भक्ति प्रधान है। भागवत पुराण और गीता इस मार्ग के प्रधान तथा आदर्श ग्रंथ हैं।
- श्रवण और कीर्तन के द्वारा भगवान की उपासना करना।
- विभिन्न देव-देवियों के स्थान पर पवित्र मन से भगवान विष्णु की उपासना करना।
- हवन, तप-व्रत आदि द्वारा की गई कष्टपूर्ण साधना अथवा उपासना की अनुपयोगिता का दर्शन।
- गुरु और सत्संग का श्रेयस्कर प्रभाव।
- अहिंसा, प्रेम, दया, आदि जैसी प्रवृत्तियों का प्रभाव।
- भक्ति के क्षेत्र में ब्राह्मण-चांडाल सभी को समान अधिकार प्राप्त होना।

उपर्युक्त नीति तथा आदर्शों को सहज रूप में समझाने के लिए तथा जनसाधारण के श्रवण, कीर्तन, स्मरण आदि की सुविधा के लिए महापुरुष और वैष्णव संतों ने काव्य, नाट और गीतों की रचना कीं। यह

रचना-समूह अधिकांश मात्रा में अनुदित है, लेकिन आक्षरिक अथवा शाब्दिक नहीं कह सकते हैं। देश, काल को देखकर उनके उपयोगी रूप में अपने तरीके से अपनी रचना समूह उनके सामने लाये हैं। इनमें से प्राय: रचना मौलिक रूप में भी मिलते हैं।

उद्देश्य:

एकशरण नाम धर्म का उद्देश्य एक व्यापक समर्थन आधार तैयार करना था जिसमें विभिन्न वर्ग के लोग शामिल थे। संत शंकरदेव ने साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से आस्था के धार्मिक सिद्धांतों को स्थापित किया और उनके प्रचार-प्रसार के लिए प्रभावी उपकरण तैयार किए। उन्होंने प्रचार के लिए एक ऐसी भाषा भी अपनाई जो आम लोगों के लिए समझने योग्य थी। असम में 'एकशरण नाम धर्म' भक्ति की लोकप्रियता का श्रेय शंकरदेव और उनके प्रमुख शिष्यों माधवदेव और दामोदरदेव और उनके बाद आने वाली पीढ़ियों के भक्ति प्रचारकों द्वारा अपनाए गए।

विश्लेषण :

महापुरुष शंकरदेव के नववैष्णव धर्म के कारण जिस विराट साहित्य की रचना हुई उससे- शंकरदेवकालीन और शंकरोत्तर साहित्य का निर्माण हुआ।

प्रो॰ भूपेन्द्र रायचौधुरी की पुस्तक 'असमीया साहित्य निकष' के अनुसार पिछले हज़ार वर्ष में असमीया साहित्य का जो रूप सामने उभर कर आया है, उसे निम्नांकित कालों में इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है –

- आदिकाल (950-1300 ई.)
- मध्यकाल (1300-1826 ई.)
- आधुनिक काल (1826 ई. से अबतक)

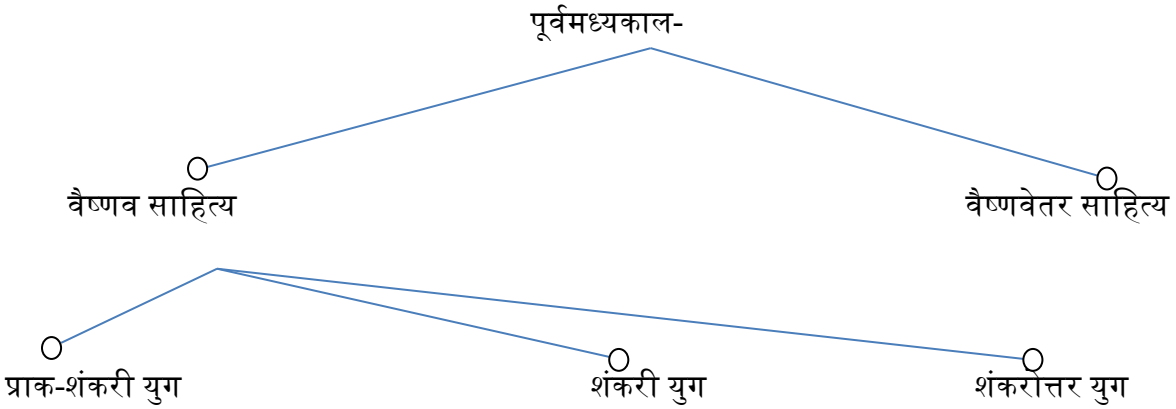

शंकरी युग को असमीया साहित्य का स्वर्ण-युग माना जाता है। इसे शंकरकालीन युग भी कहा जाता है। असम में नव-वैष्णव धर्म के प्रवर्तक शंकरदेव ने पंद्रहवीं शती में 'एकशरणीया भागवती नाम-धर्म' के माध्यम से असम में नव-वैष्णव आन्दोलन चलाया। '*गीता*' से 'एकशर-तत्व' और '*भागवत*' से 'भक्ति-तत्व' को लेकर नाम-धर्म का प्रचार-प्रसार कराया।

शंकरदेव प्रवर्तित नव-वैष्णव धर्म मूलतः कृष्ण भक्ति प्रधान है। यहाँ श्रवण-कीर्तन और सत्संग द्वारा भक्ति के सहज-सरल मार्ग को अपनाने पर बल दिया गया। अहिंसा, प्रेम, करुणा, क्षमा इत्यादि मानवीय सद-गुणों का विकास कर मानवतावाद को प्रतिष्ठा करना शंकरदेव का उद्देश्य था। इसके लिए इन्होंने सामूहिक 'कीर्तन-घर' या 'नाम-घर' की स्थापना कर समाज में समरसता लाने का प्रयत्न किया। शंकरदेव ने भक्ति-साहित्य की रचना कर असमीया साहित्य को समृद्ध किया। इनकी रचनाओं का वर्गीकरण निम्नलिखित है :

- काव्य : 1.हरिश्चंद्र उपाख्यान, 2.रुक्मिणीहरण काव्य, 3.बलिछलन, 4.अमृत-मंथन, 5.अजामिल उपाख्यान, 6.कुरुक्षेत्र
- भक्तितत्व विषयक ग्रंथ : 1.भक्तिप्रदीप, 2.भक्ति रत्नाकर (संस्कृत), 3.निमिनवसिद्धसंवाद
- अनुवादमूलक : 1.भागवत – प्रथम, द्वितीय, षष्ठ (अजामिल उपाख्यान), अष्टम (बलिछलन, अमृत मंथन), दशम, एकादश, द्वादश स्कन्ध, 2.उत्तराकांड रामायण
- अंकीया नाट : 1.चिह्नयात्रा (अप्राप्य), 2.पत्नीप्रसाद, 3.कालिदमन, 4.केलिगोपाल, 5.रुक्मिणीहरण, 6.पारिजातहरण, 7.रामविजय
- गीत : 1.बरगीत, 2.भटिमा, 3.टोटय और चपय
- नाम-कीर्तन : 1.कीर्तन, 2.गुणमाला

भवप्रसाद चलिहा द्वारा सम्पादित 'शंकरी संस्कृतिर अध्ययन' नामक ग्रंथ में शंकरदेव द्वारा विरचित निम्न पंक्तियों में उनके धर्मदर्शन की झलक मिलती है-

एक ब्रह्म आछे सर्वदेहत प्रकटे ।
जेन एक आकाश प्रत्येक घटे घटे ।।

जलत सूर्यक जे देखि भिन भिन ।
एहि मते जानिबा ब्रह्मतो भेदहीन ।। (चलिहा 1999:15)

वैष्णव नीतियों और आदर्शों को आम लोगों तक पहुँचाने के लिए शंकरदेव ने भक्ति परक गीत, काव्य, नाटकों की रचनाएँ कीं और भागवत जैसे भक्तिपरक ग्रंथों का अनुवाद करके आम लोगों के लिए बोधगम्य बनाया था। उनकी रचनाओं का महत्त्व किसी भी साहित्यिक उपलब्धि से कम नहीं है। फिर भी उनको साहित्यकार से ज्यादा धर्म प्रचारक के रूप में जाना जाता है। उस समय का समाज जाति-पाँति, छुआछूत, धर्मीय आडम्बर आदि से बुरी तरह ग्रसित था। बड़ी निर्भीकता से शंकरदेव ने समाज में व्याप्त इन बुराइयों को मिटाकर एक आदर्श समाज की कल्पना को साकार रूप देना चाहा। उन्होंने लोगों को विश्व भातृत्व, सामाजिक समता, उदार मानवतावाद आदि का संदेश दिया और सभी को एकसूत्र में बाँधने के उद्देश्य से *'भागवत'* के आधार पर नवधा भक्ति को स्वीकार कर 'एकशरणीय भगवती नाम धर्म' का प्रवर्तन किया।

असम में नव वैष्णव धर्म के प्रचार से पहले धार्मिक क्षेत्र में उथल-पुथल मचा हुआ था। उस समय विभिन्न देव-देवियों की पूजा अर्चना की जाती थी और धर्म के नाम पर शैव, शाक्त, बौद्ध, नाथ आदि कई सम्प्रदायों का उद्भव हुआ था। प्रत्येक सम्प्रदाय खुद को श्रेष्ठ सिद्ध करने में और दूसरे को नीचा दिखाने में व्यस्त रहते थे। इस प्रकार धर्म अपने वास्तविक रूप से दूर होता गया। धार्मिक स्थल भी व्यभिचार का केन्द्र बन गया था। शक्ति की उपासना करने वाले लोग पूजा-पाठ, यज्ञ, बलि-विधान में मत्त रहते थे। लोगों के मन में धर्म के प्रति श्रद्धा अथवा भक्ति के स्थान पर ढोंग, आदि बाह्य क्रिया-कलापों ने स्थान बना लिया था। उस समय लोगों को लोभ दिखाकर अथवा डरा धमकाकर धर्म का परिवर्तन करवाया जाता था। एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के अनुयायियों को घृणा की नज़र से देखते थे। शंकरदेव ने 'एक शरणीया नाम धर्म' का प्रवर्तन करके अभूतपूर्व परिवर्तन कर दिया था। उस समय उन्होंने असमीया समाज में बहु देव उपासना, पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड, जप-यज्ञ आदि के विपरीत एक देव की प्रतिष्ठा कीं। उन्होंने ब्राह्मण से लेकर चांडाल तक को अपने धर्म में शरण दिया और अहिंसा, प्रेम, दया, ममता, समन्वय-संगठन आदि सद्गुणों का विकास कर नैतिक जीवन के उत्थान पर बल दिया।

शंकरदेव ने अपने धार्मिक उदार मतों द्वारा न केवल लोगों को सम अधिकार देने की कोशिश कीं बल्कि माधवदेव जैसे शाक्त अनुयायी को भी अपना मतादर्श परिवर्तन करने के लिए प्रेरणा दीं। बाद में वही माधवदेव उनके प्रमुख शिष्य बनें और वैष्णव धर्म प्रचार करने में उनके सहयोगी बनें।

शंकरदेव के धार्मिक रूप को हम दो दृष्टि से देख सकते हैं। पहले उन्होंने धर्म के क्षेत्र में व्याप्त बुराइयों को मिटाया। उनमें से प्रमुख हैं - शाक्त मतादर्शों का खण्डन, ब्राह्याडम्बर, मूर्तिपूजा, हिंसा, परनिंदा, उच्च-नीच भावना आदि का विरोध, परन्तु इनका उद्देश्य सिर्फ इन बुराइयों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना

नहीं था बल्कि ऐसे कुछ आदर्शों की प्रतिष्ठा करना भी था जो धार्मिक क्षेत्र में नवीन परिवर्तन ला सके। जिनमें से प्रमुख हैं मानवतावाद की प्रतिष्ठा, नैतिकता को महत्त्व प्रदान, सार ग्रहण का समर्थन, विविध धर्म तथा जातियों में एकता स्थापन आदि।

समाज में एकता और समता बनाए रखने के लिए ब्राह्याडम्बर को त्याग कर एक सहज-सरल और उदात्त मार्ग का अवलम्बन करना अतिशय आवश्यक है। इस मर्म को वह भली-भाँति समझ पाए थे। उन्होंने जो धर्म का प्रचार किया था वह आडम्बर रहित था। उन्होंने 'एक शरणीया नाम धर्म' के अनाडम्बर पद्धति के माध्यम से धार्मिक शोषण से जर्जरित असमीया समाज को धार्मिक भ्रष्टाचार तथा शोषण से मुक्ति देने की अभिनव कोशिश कीं। उन्होंने तीर्थ, व्रत, तप-जप, भोग आदि की असार्थकता सिद्ध करते हुए कहा, जिसका उल्लेख पराग कुमार भट्टाचार्य के ग्रंथ *'प्रेमधर्म आरू वैष्णव काव्य'* में मिलता है –

तीरिथ बरत तप जप भाग योग सुगुति।
मंत्र परम धरम करम करत गहि मुकुति।। (भट्टाचार्य 1997:22)

शंकरदेव ने अनुभव किया था कि भगवान एक है और वे ही इस समस्त सृष्टि के कर्ता है। वे ही एकमात्र सत्य है शेष सब माया है। मनुष्य के मन में इस चेतना का संचार करने के लिए उन्होंने कहा जिसका उल्लेख पराग कुमार भट्टाचार्य के ग्रंथ *'प्रेमधर्म आरू वैष्णव काव्य'* में मिलता है –

मायातेसे देखय विविध परिच्छेद
स्वरूपत तोमार नाहिके किछु भेद ।
चेतन्य स्वरूपे व्यप्ति एक निरंजन
तोमाक बुलिबे द्वित कोन अज्ञजन ।। (भट्टाचार्य 1997:28)

इस प्रकार वे पर और अपर ब्रह्म में ईश्वर को विभक्त न करके केवल एक में ध्यान केंद्रित कर और धर्म के नाम पर बाह्य क्रिया-कलापों के स्थान पर सहज पंथ को अपनाने की बात करते थे। उन्होंने लोगों को ईश्वर-सृष्ट सभी प्राणियों के प्रति दयाशील होने के लिए भी आह्वान किया। वे बलि-विधान के नाम पर निरीह जीवों पर हो रहे हत्या को रोकना चाहते थे, क्योंकि उनके अनुसार सभी जीवों में ईश्वर का निवास होता है। सूर्य हाजरिका के ग्रंथ *'श्रीमंत शंकदेव बाक्यामृत'* से शंकरदेव ने जीवों में ईश्वर की स्थिति संबंधी कुछ पंक्ति इस प्रकार हैं -

समस्त प्राणीते मई व्यापी आछो हरि,
सबाको मानिबा तुमि विष्णु बुद्धि करि।
कुकुर शृगाल गदर्भरो आत्माराम,

जातिया सवाको परि करिबा प्रणाम।। (हाजरिका 2014:148)

वे जाति-भेद को समाज की नकारात्मक शक्ति मानते थे। इसीलिए उन्होंने सभी धर्म के लोगों को शिष्यत्व प्रदान किया। वे अपने भक्तिमार्ग के माध्यम से एक समतापूर्ण समाज के निर्माण हेतु प्रयत्नशील रहे। जो लोग अपने आपको उच्च जाति के समझते थे और निम्न श्रेणी के लोगों के प्रति हीन भाव रखते थे अर्थात जाति-पाँति, ऊँच-नीच, ब्राह्मण-शूद्र भेद रखते थे उन लोगों की उन्होंने कड़ी से कड़ी शब्दों में निंदा कीं। भेदभाव का जो दीवार है उसे मिटाकर सामाजिक समता-प्रतिष्ठा के लिए वह प्रयत्नशील रहे। सूर्य हाजरिका के ग्रंथ से शंकरदेव के जाति भेद संबंधी एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

किराट कछारी खाचि गारो मिरि
यवन कंक गोवाल।
असम मलुक धोवा ये तुरुक
कुबाच म्लेच्छ चंडाल।।
आनो पापी नर कृष्ण सेवकर
संगत पवित्र हय।
भकति लभिया संसार तरिया
बैकुंठ सुखे चलय।। (हाजरिका 2014:225)

पराग कुमार भट्टाचार्य के ग्रंथ *'प्रेमधर्म आरू वैष्णव काव्य'* से अन्य एक उदाहरण जो सभी वर्णों के लोगों को समानाधिकार प्रदान करता है -

चंडाले करिछे हरि कीर्तन। बुलिया निन्दे जितो महाजन।।
ताक सम्भासन जिजने करे। अजन्मर पुण्य तेखने हरे।।
विष्णुर गुण नाम अलंकृत। अत्यजा जिवा करि आछे गीत।।
ताक निंदा करे जिटो कुमति। पुण्यक नाश जाय अधोगति।। (भट्टाचार्य1997:28)

नैतिकता के बिना हम एक स्वस्थ समाज की कल्पना नहीं कर सकते हैं। नैतिक जीवन के महत्त्व को स्वीकारते हुए शंकरदेव ने सत्य, अहिंसा आदि गुणों को अपनाने के लिए कहा। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के नाते लोगों को कुछ सामाजिक विधि-निषेधों का पालन करना आवश्यक होता है। शंकरदेव ने विधि-निषेधों के लिए कानूनी स्वीकृति की अपेक्षा मानवीय मूल्यों को अधिक महत्त्व दिया। दया, ममता, परोपकार, क्षमा, अहिंसा आदि का संबंध कानूनी मूल्यों की अपेक्षा मानवीय मूल्य अधिक है।

धार्मिक, सामाजिक संस्कारों के अलावा महापुरुष शंकरदेव ने लोक-रुचि में भी संस्कार साधन किया। शंकरदेव और उनके प्रिय शिष्य माधवदेव धर्म प्रचार के लिए जहाँ-जहाँ गए वहीं-वहीं पर सत्रों का

निर्माण होता था जो समाज के सभी लोगों का मिलन स्थल है। लोक-रुचि के लिए वहाँ भगवद्-कीर्तन के अतिरिक्त सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन होता है। विभिन्न प्रकार के त्यौहार बड़े ही उल्लास से मनाये जाते हैं, नाटक खेले जाते हैं। इस प्रकार लोक-रुचि में संस्कार साधन होता है साथ ही साथ सत्रों में समानता की भावना होने के कारण प्रेम–मैत्री की भावना बढ़ती है।

निर्गुण राम

यद्यपि एकशरण अवैयक्तिक (निर्गुण) भगवान को स्वीकार करता है, तथापि वह वैयक्तिक (सगुण) को पूजनीय के रूप में पहचानता है। एकमात्र पहलू जो वैयक्तिक को अवैयक्तिक से अलग करता है वह सृजन का कार्य है, जिसके द्वारा नारायण ने सब कुछ बनाया है।

नारायण को वैयक्तिक और पूजनीय देवता के रूप में एक प्रेमपूर्ण और प्रिय देवता माना जाता है, जिनके पास शुभ गुण हैं जो भक्तों को आकर्षित करते हैं। वह अद्वैत, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है; सभी का निर्माता, पालनकर्ता और संहारक। उनके पास करुणामय (दयालु), दीनबंधु (नीचों का मित्र), भक्त-वत्सल (भक्तों का प्रिय) और पतित-पावन (पापियों का उद्धारक) जैसे नैतिक गुण भी हैं जो उन्हें भक्तों के लिये आकर्षक बनाते हैं। हालांकि शंकरदेव अन्य देवताओं के अस्तित्व से इंकार नहीं करते हैं, लेकिन यह दावा करते हैं कि अकेले नारायाण ही पूजनीय हैं।

शंकरदेव वैष्णव धर्मी थे। इस भक्ति परंपरा में एक ही ईश्वर को परमब्रह्म मानकर उनका नाम-कीर्तन किया जाता है। शंकरदेव के आराध्य परमब्रह्म निर्गुण थे, पर उस निर्गुण तक पहुँचने के लिए एक आलंबन की आवश्यकता होती है, क्योंकि आलंबन के बिना भक्ति को केंद्रीभूत कर पाना साधारण जनता के लिए आसान नहीं है। इसीलिए उन्होंने अपने लक्ष्य निर्गुण तक पहुँचने के लिए सगुण का मार्ग अपनाया। इससे साधारण जनता को भी भक्ति मार्ग में कोई असुविधा नहीं हुई। निर्गुण भक्ति विषयक बरगीतों में भक्ति की महिमा, आत्म-निवेदन, नाम-महिमा, संसार की नश्वरता, माया का तिरस्कार आदि का चित्रण मिलता है। साथ ही उन भक्तों के उद्धारक, अनाथों के नाथ परमब्रह्म का उल्लेख भी मिलता है, जिसके नाम के स्मरण मात्र से ही संसार के सारे दु:ख मिट जाते हैं। उस परमसत्ता को संकेतित करने के लिए ही राम कृष्ण, हरि, गोपाल आदि शब्द प्रयोग में आये हैं। शंकरदेव ने नाम-कीर्तन के माध्यम से ईश्वर प्राप्ति का मार्ग सुझाया, पर आलंबन के रूप में विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण को ही लिया। उनके अधिकतर बरगीत कृष्ण लीला विषयक है। पर उनके ऐसे भी अनेक बरगीत हैं, जहाँ पर विष्णु के अन्य अवतार राम का चित्रण मिलता है। यहाँ राम निर्गुण राम हैं, अवतारी राम नहीं। राम नाम को मुक्ति का मार्ग सुझाते हुए बाक्यामृत पुस्तक में संग्रहीत बरगीत में शंकरदेव लिखते हैं–

बोलहु राम नामेसे मुकुति निदाना ।।

भव बैतरणी तरणि सुख सरणी

नाहि नाहि नाम समाना ॥(शर्मा 2014 : 958)

(भावार्थ - राम का नाम स्मरण करते रहो क्योंकि इस संसार रूपी सागर को पार करने के लिए उनके नाम के समान और कुछ भी नहीं हो सकता है । वे ही भक्तों को मुक्ति दिला सकते हैं।)

कृष्ण का किंकर कह छोर मायामोह

राम परम तत्वसार ॥ (शर्मा 2014 : 958)

(भावार्थ - शंकरदेव कहते हैं कि सांसरिक मायामोह का त्याग कर राम नाम का स्मरण करो, क्योंकि राम ही परम तत्व का सार हैं ।)

निष्कर्ष :

शंकरदेव का उद्देश्य था सभी लोगों को आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करना जो लोगों को अंधेरे से उजाले की ओर, असत् से सत् की ओर, माया से मोक्ष की ओर ले जा सके। उन्होंने इस उत्तरदायित्व को बखूबी निभाया और असमीया समाज को एक नयी राह दिखायी। तत्कालीन असम के बहु उपासना पद्धतियों के बीच शंकरदेव ने एक ऐसा सुगम मार्ग प्रस्तुत किया था जो व्यावहारिक और समन्वयात्मक है। बहुदेववाद का बहिष्कार करके एक देव की शरण में जाना, नाम का महत्त्व स्वीकार, तप-जप, योग-यज्ञ जैसे बाह्यडम्बर का विरोध जैसे धार्मिक, सत्य, अहिंसा, प्रेम-मैत्री, दया आदि जैसे मानवीय सद्गुणों का विकास कर नैतिकता और भक्ति के क्षेत्र में तथा समाज में ब्राह्मण-चांडाल को समानाधिकार देकर महापुरुष शंकरदेव धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांति लाये ।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए तथा आम लोगों के श्रवण-कीर्तन आदि की सुविधा हेतु शंकरदेव ने सत्र, नामघर आदि की स्थापना कीं तथा भाओना, नाटक, नृत्य, गीत आदि को माध्यम बनाया। *भागवत* तथा अन्य भक्तिपरक ग्रन्थों का अनुवाद करके भी विषय को सहज और बोधगम्य बनाया। इस प्रकार उन्होंने लोगों में द्वैत भावना के स्थान पर अद्वैत भावना, हिंसा के स्थान पर अहिंसा, विनाश के स्थान निर्माण, घृणा के स्थान पर प्रेम, अहंकार के स्थान पर विनम्रता का संदेश दिया। अतः कह सकते हैं कि महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव ने अपनी मर्मस्पर्शी वाणी के द्वारा तत्कालीन धार्मिक पाखण्डों एवं सामाजिक कुरीतियों का बहिष्कार करके जनमानस को सरल जीवन, सत्याचरण, एकता, समता आदि की ओर उन्मुख करने में एकशरण नाम धर्म द्वारा जो अहम भूमिका निभायी वह सदा स्मरणीय है ।

ग्रंथ-सूची :

चलिहा, भवप्रसाद, सम्पा. शंकरी साहित्यर समीक्षा. गुवाहाटी : श्रीमंत शंकरदेव संघ, 1981.

चलिहा, भवप्रसाद, सम्पा. शंकरी संस्कृतिर अध्ययन. गुवाहाटी : श्रीमंत शंकरदेव संघ, 1999.

द्विवेदी, हजारी प्रसाद. हिंदी साहित्य की भूमिका. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2005.

प्रसाद, कृष्ण नारायण. महाकवि शंकरदेव – विचारक एवं समाज सुधारक. प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2015.

बोरा, जशोधरा, सम्पा. भक्तिकालीन वैष्णव कवि महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव. प्रथम संकरण, नई दिल्ली : जय भारत प्रकाशन, 2020.

भट्टाचार्य, पराग कुमार. प्रेमधर्म और वैष्णव काव्य. गुवाहाटी : चन्द्र प्रकाश, 1997.

मजुमदार, बिमल. भक्ति साहित्य. गुवाहाटी : चन्द्र प्रकाश, 2013.

रायचौधुरी, भूपेन्द्र सम्पा॰ असमिया साहित्य निकष. प्रथम संस्करण, विश्वविद्यालय प्रकाशन विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, 2006.

हाजरिका, सूर्य. श्रीमंत शंकरदेव वाक्यामृत. गुवाहाटी : बाणी मंदिर, 2014.

Wikipedia :

https://en.wikipedia.org › wiki › E...

एकाशरण धर्म – विकिपीडिया

****

संपर्क सूत्र :

डॉ. जशोधरा बोरा

सहायक आचार्य , हिन्दी विभाग

डिमरीया महाविद्यालय

चलभाष -8761870277

ई-मेल-jashodhara.borah@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 12-23

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना में डॉ॰ भीमराव अंबेडकर की भूमिका

अब्दुल्लाह क़ुरैशी

शोध-सार :

डॉ॰. भीमराव अंबेडकर ने भारतीय संविधान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, विशेष रूप से सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को स्थापित करने में। उनका मानना था कि सामाजिक न्याय केवल कानूनी समानता तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसमें सामाजिक और आर्थिक समानता भी शामिल होनी चाहिए। संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमेटी (मसौदा समिति) के अध्यक्ष के रूप में, अंबेडकर ने संविधान में कई ऐसे प्रावधान जोड़े जो सामाजिक न्याय की नींव रखते हैं।अंबेडकर के योगदान का प्रमुख उदाहरण अनुच्छेद 14 है, जो कानून के समक्ष समानता और कानून के समान संरक्षण का अधिकार देता है। अनुच्छेद 15 जाति, धर्म, लिंग, या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव को रोकता है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और इसे कानून द्वारा दंडनीय अपराध बनाता है। इसके अलावा, अनुच्छेद 46 राज्य को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने का निर्देश देता है। अंबेडकर ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए सरकारी नौकरियों और शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण की नीति का समर्थन किया, जिसका उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक समानता को बढ़ावा देना था। संविधान में किए गए विभिन्न संशोधनों से स्पष्ट होता है कि अंबेडकर के विचारों ने सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को मजबूत किया है। उनके द्वारा प्रस्तावित प्रावधान और नीतियाँ भारतीय समाज में व्याप्त असमानताओं को दूर करने और एक समतावादी समाज की स्थापना की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। वर्तमान समय में भी, अंबेडकर के विचार और उनके द्वारा स्थापित किए गए संवैधानिक प्रावधान सामाजिक न्याय की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस समीक्षा का उद्देश्य अंबेडकर के योगदान का विश्लेषण करना और उनकी प्रासंगिकता को आधुनिक संदर्भ में समझना है।

बीज-शब्द : *संविधान सभा, मसौदा समिति, सामाजिक और आर्थिक समानता, अनुसूचित जाति और जनजाति*

प्रस्तावना :

भारतीय संविधान एक ऐतिहासिक दस्तावेज है जिसने भारतीय समाज को सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक असमानताओं के खिलाफ लड़ने का मार्ग प्रशस्त किया। इसके निर्माण में डॉ॰. भीमराव अंबेडकर (1891-1956) का योगदान अविस्मरणीय है। वे संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष थे और उन्होंने संविधान में सामाजिक न्याय को स्थापित करने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान शामिल किए। इस प्रस्तावना में, हम डॉ॰. भीमराव अंबेडकर के संविधान में सामाजिक न्याय को स्थापित करने की भूमिका का विश्लेषण

करेंगे। प्राथमिक उद्देश्य है उनके योगदान की महत्वता को समझना, उनके विचारों का मूल्यांकन करना, और उनके प्रावधानों की विशेषता पर ध्यान केंद्रित करना।

विश्लेषण :

डॉ॰. भीमराव अंबेडकर भारतीय समाज के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले एक प्रमुख विचारक और राजनीतिज्ञ थे। अंबेडकर का जन्म एक दलित परिवार में हुआ था, जिसने उन्हें समाज में अत्याधुनिक शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध किया। उन्होंने विभिन्न शिक्षा संस्थानों से अपनी शिक्षा पूरी की, और बाद में विदेश में शिक्षा प्राप्त की। अंबेडकर ने अपने जीवन में समाज में अत्याधुनिकता, शिक्षा, और समाजिक न्याय के प्रति अपना समर्थन प्रकट किया। उन्होंने दलितों के अधिकारों की लड़ाई में अपने जीवन को समर्पित किया और समाज में उन्हें समानता और न्याय की दिशा में अग्रसर करने के लिए कई उपाय किए।

> अंबेडकर की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय धारा में अग्रणी भूमिका रही, जिसने उन्हें भारतीय संविधान के निर्माता के रूप में महत्वपूर्ण योगदान के लिए प्रसिद्ध किया। उन्होंने संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमिटी के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया और भारतीय संविधान का निर्माण करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। (जोशी 2001:46-51)

डॉ॰. अंबेडकर का मानना था कि समाजिक न्याय केवल कानूनी समानता तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसमें सामाजिक और आर्थिक समानता भी शामिल होनी चाहिए। सामाजिक न्याय का मतलब उस समाज की स्थिति से है जिसमें हर व्यक्ति को समान अधिकार और अवसर मिले, चाहे वह किसी भी वर्ग, जाति, या धर्म से हो। अंबेडकर ने संविधान में कई प्रावधानों को जोड़कर सामाजिक न्याय की अवधारणा को साकार किया। उनके द्वारा शामिल किए गए प्रावधान संविधान को एक समतावादी दृष्टिकोण प्रदान करते हैं जो समाज में समानता और न्याय को प्रोत्साहित करता है।

अंबेडकर की मृत्यु 6 दिसंबर 1956 को हुई, लेकिन उनकी विचारधारा और उपलब्धियों का प्रभाव आज भी समाज में महसूस किया जाता है। उनके जीवन और कार्य के गहरे अध्ययन ने हमें समाज में समानता, न्याय, और सामाजिक न्याय की दिशा में अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया है।

डॉ॰ आंबेडकर और भारतीय संविधान: सहसंबंध :

डॉ॰. भीमराव अंबेडकर और भारतीय संविधान के बीच का संबंध भारतीय समाज के उत्थान और समाजिक न्याय की प्राथमिकता के प्रति उनके समर्पण को प्रतिबिंबित करता है। डॉ॰. अंबेडकर ने भारतीय संविधान के निर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिसने समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की गारंटी प्रदान की।

> अंबेडकर संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष थे, और उन्होंने संविधान के निर्माण में सबसे प्रमुख भूमिका निभाई। (शर्मा 2010:112-117)

डॉ॰. अंबेडकर ने संविधान में सामाजिक न्याय, अधिकार, और समानता को प्रोत्साहित करने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान जोड़े। उनका महत्वपूर्ण योगदान उनके अनुसार बनाए गए प्रावधानों में व्याप्त है, जिनका समाज में अत्याधुनिकता, न्याय, और सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के लिए निर्माण किया गया ।उनके नेतृत्व में, संविधान ने जाति, लिंग, धर्म, और निवास स्थान के आधार पर भेदभाव को रोकने के लिए महत्वपूर्ण प्रावधान शामिल किए। उन्होंने समाज में अपराधों के खिलाफ न्याय और समानता की गारंटी प्रदान की, और अपराधी वर्गों के लिए सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा के उपायों को प्रस्तुत किया।

अंबेडकर के द्वारा निर्मित संविधान के प्रावधानों ने भारतीय समाज में अत्याधुनिकता और न्याय की प्रेरणा दी, जिससे समाज में अधिक उत्थान और समरसता की स्थापना हुई। डॉ॰. अंबेडकर का संविधान के निर्माण में योगदान न केवल भारतीय समाज के लिए महत्वपूर्ण था, बल्कि उनके विचारों का प्रभाव आज भी विश्व समुदाय में महसूस किया जा रहा है।

सामाजिक न्याय की संकल्पना का अर्थ एवं महत्व :

सामाजिक न्याय की संकल्पना समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण है। यह संकल्पना समाज के विभिन्न वर्गों, समुदायों, और व्यक्तियों के बीच न्यायपूर्ण संबंधों की स्थापना करती है और समाज में संतुलन और समरसता को बढ़ावा देती है।

सामाजिक न्याय की संकल्पना का महत्व बहुतायत में उसके समाज के उत्थान और विकास के संदर्भ में होता है। एक समर्थ समाज में, सामाजिक न्याय की प्राप्ति न केवल व्यक्तियों को अधिक समान अवसर प्रदान करती है, बल्कि यह समाज की समृद्धि और समानता की प्राप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

समाज के असमान वर्गों के बीच न्यायपूर्ण संबंधों की स्थापना करने का काम सामाजिक न्याय द्वारा सुनिश्चित किया जा सकता है। यह न केवल विभिन्न समुदायों को समान अवसर प्रदान करता है, बल्कि उनके हकों की रक्षा और सुनिश्चितता को भी प्राथमिकता प्रदान करता है।

सामाजिक न्याय की संकल्पना एक समर्थ समाज में संघर्ष और विभाजन को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह समाज के सभी वर्गों और समुदायों के बीच संबंधों को मजबूत और समरस बनाती है, जिससे समाज की समृद्धि, स्थिरता, और विकास को बढ़ावा मिलता है।

> इसके अलावा, सामाजिक न्याय की संकल्पना समाज में संघर्षों, असमानता, और अन्याय के खिलाफ लड़ाई को प्रोत्साहित करती है। (जैन 2005:85-87)

यह सामाजिक बदलाव की प्रेरणा और समाज में सुधार की प्रेरणा देती है, जिससे न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति होती है।सामाजिक न्याय की संकल्पना समाज के विकास और प्रगति के लिए आवश्यक है। यह समाज में समानता, न्याय, और सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति के लिए एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है, जो समाज की समृद्धि और समानता के लिए आवश्यक है।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की संकल्पना और डॉ॰ भीमराव अंबेडकर :

भारतीय संविधान भारतीय समाज के सम्मान, समानता, और न्याय की संकल्पना को प्रकट करता है। इसकी रचना में डॉ॰. भीमराव अंबेडकर का महत्वपूर्ण योगदान है, जिनके विचारों और सृजनात्मक धारणाओं ने संविधान में सामाजिक न्याय की प्राधान्यता को प्राप्त किया।

संविधान की संकल्पना में सामाजिक न्याय का महत्वपूर्ण स्थान है, जिसका मूल उद्देश्य समाज में न्याय और समानता की प्राप्ति है। भारतीय संविधान के निर्माण में डॉ॰. अंबेडकर का योगदान निराधार नहीं हो सकता है, क्योंकि उनकी विचारधारा और कार्य ने संविधान को एक सामाजिक न्यायपूर्ण दस्तावेज बनाया।

डॉ॰. अंबेडकर की विचारधारा समाज में असमानता, उत्पीड़न, और भेदभाव के खिलाफ थी, और उन्होंने संविधान में इस विचारधारा को प्रकट किया। संविधान के निर्माण में, उन्होंने सामाजिक न्याय को स्थापित करने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान शामिल किए। उनका प्रमुख ध्यान समाज के पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों, और अनुसूचित जनजातियों के हितों की सुनिश्चितता में था।

संविधान में अंबेडकर द्वारा शामिल किए गए प्रावधान सामाजिक न्याय की संकल्पना को समाप्ति तक पहुँचाने का काम करते हैं। अनुच्छेद 14 और 15 में भेदभाव के खिलाफ न्याय की गारंटी दी गई है, जबकि अनुच्छेद 17 ने अस्पृश्यता को समाप्त करने का प्रावधान किया है। अनुच्छेद 46 ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों को बढ़ावा देने का संविधानिक संरचना बनाया है।

अंबेडकर के योगदान ने संविधान को एक सामाजिक न्यायपूर्ण दस्तावेज बनाया, जो समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति के लिए साकार किया गया है। अंबेडकर के सोच का प्रभाव आज भी समाज के विभिन्न क्षेत्रों में महसूस किया जा रहा है, और उनकी सोच की उपेक्षा न करते हुए, हमें संविधान के विभिन्न प्रावधानों का मूल्यांकन करना चाहिए। अंबेडकर की सोच और उनके कार्य का अध्ययन हमें सामाजिक न्याय की संकल्पना को समझने और समाज में न्याय के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को मजबूत करने में मदद करता है।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की संकल्पना के मुख्य तत्व :

भारतीय संविधान एक ऐतिहासिक दस्तावेज है जो समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की संरचना और समाप्ति को साकार करता है। संविधान में

> सामाजिक न्याय को स्थापित करने के लिए कई महत्वपूर्ण तत्व शामिल हैं, जो समाज में समानता और न्याय की प्राप्ति के लिए प्रमुख हैं। (शुक्ल 2012:33-71)

पहला महत्वपूर्ण तत्व समानता का है, जो अधिकारों, व्यवस्थाओं, और सुविधाओं के वितरण में समान भागीदारी की मांग करता है। संविधान में अनुच्छेद 14 और 15 में इसे प्रकट किया गया है, जिसमें व्यक्तियों के अधिकारों की गारंटी दी गई है और भेदभाव के खिलाफ न्याय की मांग की गई है।

दूसरा महत्वपूर्ण तत्व विचारधारा का है, जिसमें समाज में समानता के प्राप्ति के लिए भेदभाव के खिलाफ लड़ाई की जाती है। अंबेडकर जैसे विचारकों के ध्यानाधार में, संविधान में विभिन्न प्रावधानों में भेदभाव के खिलाफ लड़ाई को प्रोत्साहित किया गया है।

तीसरा महत्वपूर्ण तत्व समाज के पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों, और अनुसूचित जनजातियों के हितों का संरक्षण है। संविधान में अनुच्छेद 17 और 46 में उनकी अधिकार प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रावधान हैं, जिससे इन वर्गों को सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा का लाभ मिल सके।

चौथा महत्वपूर्ण तत्व संविधान में सामाजिक न्याय की संरचना का है, जो समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति के लिए उपाय करता है। इस संदर्भ में, संविधान में शामिल किए गए प्रावधानों ने सामाजिक न्याय की संरचना को सुनिश्चित किया है और समाज में न्याय और समानता की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण योगदान किया है।

इन सभी तत्वों का संविधान में समाहित होना, सामाजिक न्याय की संरचना और प्राप्ति के लिए एक स्थैतिक रूप प्रदान करता है, जो समाज में न्याय, समानता, और सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। भारतीय संविधान में ये सामाजिक न्याय के तत्व समाहित होने के माध्यम से, समाज में न्याय और समानता के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को मजबूत किया जा सकता है।

संविधान में सामाजिक न्याय की आवश्यकता एवं अम्बेडकर के प्रयास :

> भारतीय संविधान को सामाजिक न्याय का सशक्त साधन बनाने में डॉ॰. भीमराव अंबेडकर की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। संविधान में सामाजिक न्याय की आवश्यकता समाज में व्याप्त असमानताओं, अन्याय, और भेदभाव को समाप्त करने के उद्देश्य से उत्पन्न हुई। डॉ॰. अंबेडकर ने संविधान के माध्यम से इन असमानताओं को समाप्त करने और समाज के सभी वर्गों को समान अधिकार और अवसर प्रदान करने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान शामिल किए। (कुलकर्णी 2003:72)

भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से जाति, धर्म, लिंग, और आर्थिक स्थिति के आधार पर गहरे भेदभाव और असमानताएँ रही हैं। इस सामाजिक संरचना ने निम्न जातियों, अनुसूचित जातियों और

जनजातियों को शिक्षा, रोजगार, और सामाजिक सहभागिता में पीछे रखा है। सामाजिक न्याय की आवश्यकता इन असमानताओं को समाप्त करने और एक समतावादी समाज की स्थापना के लिए है।

समानता का अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, और 16 में सभी नागरिकों को समानता का अधिकार दिया गया है। इन प्रावधानों का उद्देश्य समाज में किसी भी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करना है। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए शिक्षा और रोजगार में आरक्षण की व्यवस्था की गई है। इसका उद्देश्य इन वर्गों को सामाजिक और आर्थिक विकास में सहभागी बनाना है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और इसे कानूनी अपराध घोषित करता है। यह प्रावधान सामाजिक समानता और न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

> डॉ॰. अंबेडकर का जीवन समाज में व्याप्त असमानताओं और अन्याय के खिलाफ संघर्ष का प्रतीक है। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों से प्रेरित होकर संविधान में सामाजिक न्याय को प्राथमिकता दी। अंबेडकर संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमिटी के अध्यक्ष थे। उन्होंने संविधान में सामाजिक न्याय की अवधारणा को मजबूत करने के लिए कई प्रावधानों का मसौदा तैयार किया। उनकी दृष्टि एक ऐसे समाज की स्थापना थी जहाँ सभी व्यक्तियों को समान अधिकार और अवसर मिले। उन्होंने अनुच्छेद 14, 15, 17, और 46 जैसे प्रावधानों को संविधान में शामिल किया, जो समाज में समानता और न्याय की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण हैं। (गुप्ता 2008:78-81)

इन प्रावधानों ने समाज के कमजोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा की और उन्हें मुख्यधारा में शामिल करने का मार्ग प्रशस्त किया। अंबेडकर का मानना था कि समाज में समानता और न्याय की प्राप्ति के लिए आर्थिक और शैक्षिक विकास आवश्यक है। उन्होंने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक उत्थान के लिए विशेष प्रावधान किए।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की आवश्यकता समाज में व्याप्त असमानताओं और अन्याय को समाप्त करने के लिए अनिवार्य थी। डॉ॰. भीमराव अंबेडकर ने संविधान के माध्यम से सामाजिक न्याय को स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए। उनके द्वारा प्रस्तावित प्रावधान आज भी समाज में समानता और न्याय की दिशा में मार्गदर्शन करते हैं। अंबेडकर का योगदान हमें याद दिलाता है कि समाज में न्याय और समानता की प्राप्ति के लिए सतत प्रयास आवश्यक हैं। उनका जीवन और कार्य हमें प्रेरणा देते हैं कि हम सामाजिक न्याय की दिशा में आगे बढ़ें और एक समतावादी समाज की स्थापना करें।

डॉ॰ अम्बेडकर का योगदान :

अगर डॉ॰ भीमराव अंबेडकर न होते, तो भारतीय समाज और संविधान के विकास की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन और प्रगति का अभाव होता। अंबेडकर के बिना, भारतीय समाज में सामाजिक न्याय, समानता, और अधिकारों की संरचना की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम नहीं उठाए जा सकते थे।

> अंबेडकर ने अपने जीवन का अधिकांश हिस्सा दलितों, पिछड़े वर्गों, और अन्य वंचित समुदायों के अधिकारों के लिए संघर्ष में बिताया। उनकी अनुपस्थिति में, इन समुदायों को समाज में समान अधिकार और अवसर प्राप्त करने में और भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। (धर्मवीर 2009:108-109)

अस्पृश्यता और जातिगत भेदभाव के खिलाफ लड़ाई में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण थी। उनकी अनुपस्थिति में, यह समस्या और भी गंभीर हो सकती थी और समाज में असमानता और अधिक गहरी हो सकती थी।

अंबेडकर ने भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को शामिल करने में प्रमुख भूमिका निभाई। अगर वे न होते, तो संविधान में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण और समानता के प्रावधानों का अभाव होता। संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमिटी के अध्यक्ष के रूप में, अंबेडकर ने संविधान को एक समतावादी और न्यायपूर्ण दस्तावेज बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनकी अनुपस्थिति में, यह संभवतः न हो पाता।

अंबेडकर का मानना था कि समाज में समानता और न्याय की प्राप्ति के लिए शैक्षिक और आर्थिक विकास आवश्यक है। उन्होंने इन क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उत्थान के लिए विशेष प्रावधान किए। उनकी अनुपस्थिति में, इन समुदायों को शैक्षिक और आर्थिक विकास के अवसर प्राप्त करने में और भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता।

अंबेडकर ने दलितों और अन्य वंचित समुदायों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व की आवश्यकता पर जोर दिया। उनकी अनुपस्थिति में, इन समुदायों को राजनीतिक सत्ता और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में शामिल होने के अवसरों की कमी होती।

अंबेडकर ने न्यायिक प्रणाली में सुधार और इसे अधिक न्यायसंगत बनाने के लिए प्रयास किए। उनकी अनुपस्थिति में, न्यायिक प्रणाली में सुधार की गति धीमी हो सकती थी और समाज में न्याय की प्राप्ति कठिन हो सकती थी।

अंबेडकर ने दलित आंदोलन को संगठित और सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी अनुपस्थिति में, यह आंदोलन संभवतः उतना संगठित और प्रभावशाली नहीं हो पाता, जिससे दलितों के अधिकारों और समानता की लड़ाई में कठिनाइयाँ होती।

अंबेडकर के बिना, भारतीय समाज में सामाजिक न्याय, समानता, और अधिकारों की प्राप्ति की दिशा में किए गए महत्वपूर्ण प्रगति में कमी होती। उनका योगदान न केवल उनके समय में बल्कि आज भी समाज में न्याय और समानता के संघर्ष के लिए प्रेरणा का स्रोत है। उनकी अनुपस्थिति में, भारतीय समाज में सामाजिक सुधार की गति धीमी हो सकती थी और असमानता और अधिक गहरी हो सकती थी।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना के पश्चात समाज को लाभ :

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना के पश्चात समाज को अनेक महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त हुए हैं। ये लाभ न केवल दलितों, पिछड़े वर्गों, और अनुसूचित जनजातियों को प्रभावित करते हैं, बल्कि समस्त भारतीय समाज के विकास और प्रगति में सहायक साबित हुए हैं। आइए, इन लाभों को विस्तार से समझें:

सामाजिक समानता :

सामाजिक न्याय की स्थापना से भारतीय समाज में सामाजिक समानता को बढ़ावा मिला है। संविधान में शामिल अनुच्छेद 14, 15, और 16 ने सभी नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान किया है, जिससे भेदभाव के खिलाफ मजबूत सुरक्षा मिली है। इसने जाति, धर्म, लिंग, और आर्थिक स्थिति के आधार पर होने वाले भेदभाव को कानूनी रूप से समाप्त किया।

अस्पृश्यता का उन्मूलन :

> अनुच्छेद 17 ने अस्पृश्यता को कानूनी अपराध घोषित किया, जिससे समाज में एक बड़े सुधार की दिशा में कदम बढ़ाया गया। इससे निम्न जातियों के लोगों को समाज में अधिक सम्मान और समान अधिकार प्राप्त हुए हैं। (सिन्हा 2014:22)

आरक्षण प्रणाली :

> अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण प्रणाली ने शिक्षा और रोजगार में उनके प्रतिनिधित्व को बढ़ाया है। इस व्यवस्था ने इन वर्गों को सामाजिक और आर्थिक रूप से मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परिणामस्वरूप, समाज के इन तबकों में शिक्षा की दर में वृद्धि हुई है और आर्थिक सुधार संभव हुआ है। (वर्मा 2011:91)

शैक्षिक और आर्थिक सुधार :

सामाजिक न्याय की नीतियों ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित किया है। सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से इन वर्गों के लिए विशेष सुविधाएँ और योजनाएँ शुरू की गईं, जिनसे उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ है। उदाहरण के लिए, छात्रवृत्तियाँ,

विशेष कोचिंग, और आर्थिक सहायता योजनाएँ समाज के इन वर्गों को मुख्यधारा में शामिल करने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

राजनीतिक प्रतिनिधित्व :

सामाजिक न्याय की स्थापना ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में शामिल होने का अवसर दिया है। अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए सुरक्षित सीटों की व्यवस्था ने इन समुदायों की आवाज को राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर मजबूत किया है, जिससे उनके हितों की रक्षा संभव हुई है।

महिलाओं का अधिकार :

सामाजिक न्याय की नीतियों ने महिलाओं के अधिकारों को भी संरक्षित किया है। अनुच्छेद 15(3) के तहत राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति है, जिससे समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है। इसने महिलाओं को शिक्षा, रोजगार, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में अधिक अवसर प्रदान किए हैं।

समाज में समरसता और शांति :

सामाजिक न्याय की स्थापना ने समाज में समरसता और शांति को बढ़ावा दिया है। जब समाज के सभी वर्गों को समान अधिकार और अवसर मिलते हैं, तो सामाजिक तनाव और संघर्ष कम होते हैं। इससे समाज में अधिक सहयोग और आपसी समझ बढ़ती है, जो राष्ट्र की प्रगति और विकास के लिए महत्वपूर्ण है।

समग्र विकास :

सामाजिक न्याय की नीतियाँ समाज के समग्र विकास को प्रोत्साहित करती हैं। जब समाज के सभी वर्गों को समान अवसर मिलते हैं, तो वे अपनी क्षमता का पूर्ण उपयोग कर सकते हैं, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन और समृद्धि में वृद्धि होती है। यह देश के आर्थिक विकास को भी सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना ने समाज को अनेक महत्वपूर्ण लाभ प्रदान किए हैं। इससे समाज में समानता, न्याय, और शांति की स्थापना हुई है, जिससे समस्त भारतीय समाज के विकास और प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान हुआ है। डॉ॰. भीमराव अंबेडकर और उनके योगदान की बदौलत भारतीय समाज ने एक न्यायपूर्ण और समतावादी दिशा में कदम बढ़ाया है, जिसका सकारात्मक प्रभाव आज भी महसूस किया जा सकता है।

सामाजिक न्याय और भविष्य की दशा :

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना ने भारतीय समाज को एक मजबूत और समतावादी दिशा में आगे बढ़ने के लिए मार्गदर्शन प्रदान किया है। भविष्य में, सामाजिक न्याय की नीतियों और प्रावधानों का प्रभाव और भी व्यापक और गहरा हो सकता है।

भविष्य में, सामाजिक न्याय की नीतियाँ शिक्षा और आर्थिक क्षेत्र में और भी अधिक सुधार ला सकती हैं। सरकारी नीतियों और आरक्षण प्रणाली के तहत अधिक से अधिक लोग उच्च शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे, जिससे समाज के वंचित वर्गों को रोजगार के बेहतर अवसर मिलेंगे। यह आर्थिक असमानता को कम करेगा और समग्र राष्ट्रीय समृद्धि में योगदान देगा।

डिजिटल इंडिया और अन्य तकनीकी पहलें समाज के हाशिए पर रहने वाले वर्गों को मुख्यधारा में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी। डिजिटल शिक्षा, ऑनलाइन स्किल डेवलपमेंट प्रोग्राम्स, और ई-गवर्नेंस सेवाओं के माध्यम से सामाजिक न्याय को और अधिक प्रभावी तरीके से लागू किया जा सकेगा। इससे ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को भी समान अवसर प्राप्त होंगे।

भविष्य में, कानूनी सुधारों के माध्यम से सामाजिक न्याय को और भी सुदृढ़ किया जा सकता है। न्यायपालिका और विधायिका मिलकर समाज में व्याप्त भेदभाव और असमानता को समाप्त करने के लिए और अधिक प्रगतिशील कानून बना सकते हैं। अनुसूचित जातियों, जनजातियों, और अन्य वंचित वर्गों के लिए कानूनी सहायता और संरक्षण के प्रावधानों को और अधिक मजबूत किया जा सकता है।

भविष्य में, सामाजिक न्याय की दिशा में जागरूकता और सामाजिक चेतना में वृद्धि होगी। शिक्षा और मीडिया के माध्यम से समाज में समानता और न्याय के मूल्यों को प्रसारित किया जा सकेगा। इससे समाज में भेदभाव और असमानता के प्रति संवेदनशीलता बढ़ेगी और एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना में मदद मिलेगी।

सामाजिक न्याय की नीतियों के तहत अनुसूचित जातियों, जनजातियों, और अन्य पिछड़े वर्गों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व बढ़ेगा। भविष्य में, इन वर्गों के नेताओं की संख्या में वृद्धि होगी, जो समाज के सभी वर्गों के हितों की रक्षा करने और समावेशी नीतियों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

> महिलाओं के अधिकारों और सशक्तिकरण पर ध्यान केंद्रित करने वाली नीतियाँ भविष्य में और भी प्रभावी होंगी। शिक्षा, रोजगार, और राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी, जिससे समाज में लैंगिक समानता को बढ़ावा मिलेगा। इसके साथ ही, महिलाओं के खिलाफ हिंसा और भेदभाव को समाप्त करने के लिए और अधिक ठोस कदम उठाए जा सकते हैं। (शर्मा 2015:166-167)

भविष्य में, सामाजिक न्याय की नीतियाँ समाज में सांस्कृतिक और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देंगी। विभिन्न समुदायों और वर्गों के बीच आपसी समझ और सहयोग बढ़ेगा, जिससे समाज में तनाव और संघर्ष कम होंगे। यह एक समरस और शांतिपूर्ण समाज की स्थापना में सहायक होगा।

भविष्य में, सामाजिक न्याय की अवधारणा में पर्यावरणीय न्याय को भी शामिल किया जा सकता है। समाज के सभी वर्गों को स्वच्छ और सुरक्षित पर्यावरण प्रदान करने के लिए नीतियाँ बनाई जा सकती हैं।

इससे समाज के हाशिए पर रहने वाले वर्गों को भी पर्यावरणीय संसाधनों का समान और न्यायपूर्ण उपयोग सुनिश्चित होगा।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना ने भारतीय समाज को एक मजबूत नींव प्रदान की है, जो भविष्य में और भी प्रभावी और व्यापक हो सकती है। सामाजिक न्याय की नीतियाँ समाज के सभी वर्गों को समान अवसर, अधिकार, और सम्मान प्रदान करने में सहायक सिद्ध होंगी, जिससे एक न्यायपूर्ण और समतावादी समाज की स्थापना हो सकेगी। डॉ॰. भीमराव अंबेडकर के योगदान और उनके दृष्टिकोण के आधार पर, भारतीय समाज भविष्य में और भी प्रगतिशील और समावेशी बन सकेगा।

निष्कर्ष :

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना ने समाज को एक मजबूत और समतावादी दिशा में अग्रसर किया है। डॉ॰. भीमराव अंबेडकर के योगदान और उनकी दूरदर्शिता ने संविधान में ऐसे प्रावधान शामिल किए, जिन्होंने दलितों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को समान अधिकार और अवसर प्रदान किए।

इन प्रावधानों ने न केवल सामाजिक असमानताओं को कम किया है, बल्कि शिक्षा, रोजगार, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के क्षेत्र में भी सुधार लाए हैं। शिक्षा और रोजगार में आरक्षण, अस्पृश्यता का उन्मूलन, और राजनीतिक अधिकारों की सुरक्षा ने समाज के वंचित वर्गों को मुख्यधारा में शामिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भविष्य में, सामाजिक न्याय की नीतियाँ और भी अधिक प्रभावी हो सकती हैं। डिजिटल समावेशन, कानूनी सुधार, और सामाजिक चेतना में वृद्धि से समाज में समानता और न्याय को और अधिक मजबूत किया जा सकेगा। महिलाओं के सशक्तिकरण, पर्यावरणीय न्याय, और सांस्कृतिक समरसता को बढ़ावा देने से समाज और भी प्रगतिशील और समावेशी बनेगा।

डॉ॰. अंबेडकर के बिना भारतीय संविधान और समाज में यह प्रगति संभव नहीं होती। उनका योगदान हमें एक न्यायपूर्ण और समतावादी समाज की दिशा में निरंतर प्रयास करने की प्रेरणा देता है। सामाजिक न्याय की नीतियों का प्रभाव समाज के हर वर्ग तक पहुँचना चाहिए, जिससे एक समतावादी और समरस समाज की स्थापना हो सके।

इस प्रकार, भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय की स्थापना ने समाज को एक सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ाया है। भविष्य में इन नीतियों को और अधिक सशक्त और प्रभावी बनाने की दिशा में प्रयास जारी रहने चाहिए, जिससे समाज में वास्तविक समानता और न्याय स्थापित हो सके। डॉ॰. अंबेडकर की विरासत और उनकी दृष्टि हमें इस दिशा में निरंतर प्रेरित करती रहेगी।

ग्रंथसूची :

कुलकर्णी, पी.डी. डॉ॰योगदान सामाजिक और राजनीतिक का अंबेडकर . . पुणे प्रकाशन फुले महात्मा :, 2003.

गुप्ता, वी.के. सामाजिक न्याय और भारतीय संविधान . जयपुर प्रकाशन विश्वविद्यालय राजस्थान :, 2008.

जैन, एम.पी. भारतीय संविधान और सामाजिक न्याय . मुंबई प्रकाशन जय :, 2005.

जोशी, डी.एन. डॉ॰मसीहा के न्याय सामाजिक : अंबेडकर भीमराव .. नई दिल्ली प्रकाशन साहित्य भारतीय : , 2001.

धर्मवीर. डॉ॰व्यवस्था जाति और अंबेडकर . . वाराणसी विश्वविद्यालय हिंदू काशी :, 2009.

वर्मा, एस.के. संविधान में आरक्षण का महत्व . भोपाल प्रकाशन सरकारी मप्र :, 2011.

शर्मा, तुलसी राम. डॉ॰लोकतंत्र भारतीय और अंबेडकर . . नई दिल्ली पब्लिकेशन्स अरिहंत :, 2010.

शर्मा, मीना. डॉ॰ महिला और अंबेडकर .सशक्तिकरण . चंडीगढ़ प्रेस यूनिवर्सिटी पंजाब :, 2015 .

शुक्ल, वी.एन. भारतीय संविधान अध्ययन विस्तृत एक :. लखनऊकंपनी बुक ईस्टर्न :, 2012.

सिन्हा, आर.के. अस्पृश्यता और भारतीय संविधान . पटना परिषद राष्ट्रभाषा बिहार :, 2014.

****

संपर्क सूत्र :

अब्दुल्लाह क़ुरैशी

शोधार्थी,राजनीति विज्ञान विभाग

जय नारायण व्यास विश्विद्यालय,जोधपुर (राजस्थान)

चलभाष - 9205290292

ई-मेल : abdullahqureshi120291@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 24-32

हिंदी काव्य में आदिवासी जीवन दर्शन

डिम्पी बरगोहाँई

शोध-सार :

आदिवासी शब्द को लेकर आमजन के दिलोदिमाग में तरह-तरह की भावनाएँ जन्म लेती हैं। इन भावनाओं में कहीं नकारात्मक भाव होते हैं, तो कहीं सकारात्मक। लेकिन यह सच है कि प्रायः लोगों की भावनाएँ आदिवासी-जन की पीड़ा, संत्रास, दुख, तकलीफ आदि की ओर इंगित नहीं के बराबर करती हैं। भारत ही नहीं दुनिया के कोने-कोने में बसे आदिवासी समाज भूतकाल से लेकर वर्तमान तक अपनी अस्मिता को बनाए रखने के प्रयास में हैं, परंतु उनकी आवाज को वर्चस्वशाली वर्ग दबाकर रख देता है, क्योंकि जीवन की मूलभूत जरूरतों से जुड़ी कई सारे अनिवार्य संसाधनों पर उनका आधिपत्य है, एकाधिकार है। यद्यपि आज आदिवासी समाज के अधिकार और अस्मिता को लेकर लड़ाइयाँ कम लड़ी जा रही हैं, तथापि बहुत सारे आदिवासी-लेखक खुद अपनी लड़ाई लड़ रहे हैं। आदिवासी कविता का सम्बन्ध आदिवासी समाज से है। आदिवासी काव्य साहित्य को गतिशीलता प्रदान करने का श्रेय आदिवासी समाज की उस जीवन दर्शन को दिया जा सकता है, जहाँ समूचे जनजाति की अस्मिता को चुनौती देनेवाले उन तमाम सिद्धांतों से मुठभेड़ किया जाता है।

बीज-शब्द : *आदिवासी, काव्य साहित्य, सकारात्मक, अस्मिता, वर्चस्वशाली, एकाधिकार, चुनौती, जीवन दर्शन*

प्रस्तावना:

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। इसके साथ ही इतिहास उस समाज के अतीत की पहचान वर्तमान और भविष्य के संदर्भ में कराता है। औपनिवेशिक दौर में विदेशियों ने भारत में बसे आदिवासियों के जीवन को प्रभावित किया, उनके हाथों अपने जल, जंगल और जमीन से बेघर बनते चले गए। आदिवासियों के इतिहास का अगर अवलोकन किया जाए तो इस बात का पता चलेगा कि किस प्रकार औपनिवेशिक सत्ता ने आदिवासियों पर प्रभुत्व स्थापित करने की कोशिश की है। अत:आदिवासी साहित्य इन्हीं विषयों पर अपने विचार अभिव्यक्त करने का एक मजबूत साहित्यिक मंच है। आधुनिक काल की सशक्त विधाओं में एक काव्य विधा को माना जाता है, जो मानव समुदाय के व्यापक जीवन परिक्रमा को दर्शाता है। भारतीय इतिहास में आदिवासियों का अपना इतिहास रहा हैं, जिनकी संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, लोक-विश्वास, भाषा एवं

बोली अन्य लोगों से अलग है। इसी को आधार बनाकर लिखे गये आदिवासी उपन्यास में उनके पारम्परिक जीवन मूल्य तथा जल, जंगल और जमीन का बाहरी सत्ता द्वारा शोषण आदि का चित्रण पाया जाता है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने इन समुदायों के अस्तित्व पर संकट खड़ा कर दिया। इसी संकट को आधार बनाकर आदिवासी कविता का लेखन कार्य चल रहा है।

कविता के माध्यम से आदिवासी जनजीवन की पीड़ा को कवियों ने अपने काव्य की विषयवस्तु बनाया है। सदियों से दबी हुई अस्मिता को लेकर कविता लिखना एक चुनौती है। इसी चुनौती को स्वीकार कर कुछ कवियों ने अपनी कविताओं में आदिवासी जीवन दर्शन को पूरी निष्ठा और सहृदयता के साथ दर्शाया है। ग्रेस कुजूर की कविता 'एक और जनी शिकार' में उन्होंने अतीत जीवन का वर्तमान के साथ तुलना करते हुए आदिवासियों के जीवन में होने वाले परिवर्तन को दर्शाया है। असल में आज आदिवासियों के जल, जंगल और जमीन पर कब्जा कर रहे बाहरी सत्ता के प्रति तीखा व्यंग है यह कविता। कवि के शब्दों में-

कहाँ है वह फुटकल का गाछ
जहाँ चढ़ती थी मैं

साग तोड़ने

और गाती थी तुम्हारे लिए

फगुआ के गीत

जाने किधर है

कोमल पंक्तियों वाला कोयनार का गाछ

जिसके नीचे तुम

बजाया करते थे

मांदर और बांसुरी ? (गुप्ता 2017:21)

आदिवासियों की पारम्परिक जीवन शैली पर कृत्रिमता का प्रहार उनकी कविताओं में अभिव्यक्त हुआ है। बदलती हुई सांस्कृतिक परिस्थिति में भी अपनी पहचान को बरकरार रखने के लिए अतीत के गौरवमयी 'अँगनई और डमकच' जैसे आदिवासी राग भी आज विस्मृति के गर्भ में विलीन होता जा रहा है,जो उनकी कविता 'एक और जनी-शिकार-दो' में उल्लेख है-

कितना सुकून पैदा करती थी

रात के सन्नाटे में

मांदर के थाप

और हवा में घुलते

अंगनई और डमकच के गीत। (गुप्ता 2017:21)

प्रकृति की गोद में बसे आदिवासियों के मन में प्रकृति के प्रति गहरी आस्था है। यही उनके जीवन जीने की प्रमुख प्रेरणा है। सदियों से जंगल को अपना बनाकर रहने वाले आदिवासियों को आज विकास के नाम पर उजाड़ा जा रहा है। परिवर्तनशील समय के साथ-साथ उनके जीवन में भी बदलाव आने लगा है। प्रकृति के जिस आंचल की छाया में जीवन की कई धाराएँ बहती थीं, वे कहीं थम सी गईं। कवि ग्रेस कुजूर द्वारा रचित 'हे समय के पहरेदारों' नामक कविता के शब्दों में-

और जुड़ी है

वन प्रान्तर की कथाएँ

जिनकी तराइयों में

बहती है जीवन की कई धाराएँ

क्या तुमने देखा है

पर्वत को रोते?

क्या कभी सुनी है

उसका टुकड़े-टुकड़े होकर बिखड़ जाना ? (गुप्ता 2017:23)

अस्मिता की खोज आदिवासी कविताओं की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। विस्थापन, बाहरी सत्ता का आगमन और पारम्परिकता पर हमले ने उनकी जीवन शैली को प्रभावित किया है। दबी हुई अस्मिता को लेकर सालों बाद आवाज उठाने वाले इन समुदायों को आज विकास के नाम पर उजाड़ा गया है। आज उनके परिचित जंगलों को उनसे अपरिचित कराया जा रहा है। इतिहास के पन्नों में स्वशासन और संघर्ष के सहारे से अपनी ऐतिहासिकता बनाए रखने वाली ये जनजातियाँ आज विकास के नाम पर बिखड़ती जा रही हैं। इसी बिखराव को स्वर प्रदान करने वाले कवि 'हरिराम मीणा' की 'खत्म होती हुई नश्ल' और 'बेदखल होते हुए' नामक कविताओं में उन्होंने इस समुदाय के जीवन में आने वाले परिवर्तनों की ओर ध्यानाकर्षित किया है। जिन समुदायों ने प्रकृति की गोद में स्वावलम्बन का गुर सीखा, प्रकृति के उपकरणों को कभी भी बर्बाद करने का नहीं सोचा, अपने जीवन में एकमात्र प्रकृति के संसाधनों को ही जीवन का धरोहर माना और पूर्वपुरुषों से

लेकर आज तक उन्हें सम्भालकर रखा, आज उन्हें बेदखल कराया जा रहा है इन्हीं जंगलों से। ऐसी परिस्थिति का उल्लेख उनकी कविता 'बेदखल होते हुए' में स्पष्ट देख सकते हैं-

ऐसा लगता है

जैसे हमारे परिचित से शांत जंगलों में

घुस रहे हैं

दूर दिशाओं की तेज अंधड़

समुद्र से उठ रही आग की लपटे

...और हम बदहवास भाग रहे हैं

खोह और गुफाओं की ओर

खोज रहे किसी चट्टान का आसरा....

बेदखल होते हुए

हमारी अपनी पुश्तैनी जमीनों से। (गुप्ता 2017:28)

कवि महादेव टोप्पो की कविता आदिवासी समाज व्यवस्था के प्रति सचेतता और उन पर हो रहे अन्याय का प्रत्युत्तर है। आदिवासी समुदाय की एकता उसकी सामूहिकता की पहचान है, अब उनकी पहचान को बरकरार रखना और आने वाले संकट का समाधान सामुदायिक शक्ति से ही संभव होगा। वे 'सबसे बड़ा खतरा' कविता में यह विचार आदिवासियों तक पहुँचाना चाहते हैं कि उनका जो शोषण हो रहा है, उसके विरुद्ध उन्हें स्वयं लड़ना होगा। तभी उनके जीवन में अपेक्षित परिवर्तन संभव हो पायेगा। उन्होंने 'सबसे बड़ा खतरा' कविता के माध्यम से आदिवासी समुदाय को शिक्षित और अपनी भाषा, संस्कृति तथा इतिहास को सुरक्षित रखने का आह्वान करते हैं –

यही है सबसे खतरा

कि हम अपनी पहचान खो रहे हैं

खो रहे हैं कि हम अपने स्वाभाविक स्वर

न मिमिया रहे हैं न गरज रहे हैं

इसी कारण ऊँची अट्टालिकाओं में

पंखों के नीचे 'वे'

हमारी असमर्थता पर मुस्करा रहे है

इसीलिए मित्र आओं हम पहले

अपने कंठों में गरजती हुई आवाज भरे। (गुप्ता 2017:50)

आदिवासी कविता में आदिवासी चिन्तन तथा तथाकथित सभ्य समाज व्यवस्था के प्रति विरोध का स्वर है। इन कविताओं में प्रयुक्त भाषाओं में आदिवासियों के अस्तित्व के संघर्ष का इतिहास छिपा हुआ है। कवयित्री 'वन्दना टेटे' झारखंड की आदिवासी भाषाओं के सन्दर्भ में कहती हैं –

> झारखंड की आदिवासी भाषाएँ अपने अस्तित्व के लिए जूझ रही हैं। औपनिवेशिक काल से आज तक के स्वतंत्र भारत में झारखंडी जनगण राष्ट्रीयता एवं पहचान के लिए अंतहीन संघर्ष में है। मुंडारी, खड़िया, कुडुख और संथाली जैसी अन्य आदिम भाषाएँ अपनी उत्कट जिजीविषा के साथ लड़ते-भिड़ते हुए पुरखोती (लोक) से शिष्ट साहित्य के संसार में साहस के साथ प्रवेश कर चुकी हैं। (टेटे 2013: 37)

वंदना टेटे की कविताओं में प्रकृति का आदिवासियों से गहरा सम्बन्ध दिखाई पड़ता है। प्रकृति का मानवीय रूप और इस समुदाय का प्रकृति में अटूट विश्वास को चित्रित करने का प्रयास उनकी कविताओं में सुलभ है। उनकी कविताएँ आत्मविश्वास और आत्मसंघर्ष का पाठ पढ़ाती है। विषम परिस्थितियों में भी स्वाभिमानी होकर लड़ने की हिम्मत देती है। अपनी संस्कृति और भाषा पर गर्व करते हुए 'हम धरती की माड़ हैं' कविता में इस प्रकार लिखा है-

हमें कौन विस्थापित कर करता है

सनसनाती हवाओं और तूफानों-सी

हमारी ध्वनियों-भाषाओं को

कौन विलोपित कर सकता है

कोई इन्सान? कोई धर्म? कोई सत्ता?

(http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%B9%E0%A4%AE_%E0%A4%A7%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%80_%E0%A4%95%E0%A5%80_%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A1%E0%A4%BC_%E0%A4%B9%E0%A5%88%E0%A4%82_/_%E0%A4%B5%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A6%E0%A4%A8%E0%A4%BE_%E0%A4%9F%E0%A5%87%E0%A4%9F%E0%A5%87)

झारखंड के आदिवासी परिवार में जन्मी निर्मला पुतुल के काव्य साहित्य में भी आदिवासी जीवन के आयामों को करीब से देखा जा सकता है। आदिवासी जीवन की सामाजिक गतिविधियों तथा इस समाज में स्त्री और पुरुष का स्थान और बाहरी सत्ता के हाथों होने वाले स्त्री शोषण का चित्रण उनकी कविताओं में है। इसके साथ ही पुरुषसत्तात्मक समाज में स्त्री स्वयं अपने अस्तित्व के साथ अपनी जगह भी तलाशती है। उनकी कविता संग्रह 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' में 'अपनी जमीन तलाशती बेचैन स्त्री' शीर्षक कविता में स्त्री अस्मिता पर सवाल उठाया गया है-

> यह कैसी विडम्बना है कि हम सहज अभ्यस्त हैं
>
> एक मानव पुरुष-दृष्टि से देखने स्वयं की दुनिया

(http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%85%E0%A4%AA%E0%A4%A8%E0%A5%80_%E0%A4%9C%E0%A4%BC%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8_%E0%A4%A4%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%B6%E0%A4%A4%E0%A5%80_%E0%A4%AC%E0%A5%87%E0%A4%9A%E0%A5%88%E0%A4%A8_%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%80_/_%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%B2%E0%A4%BE_%E0%A4%AA%E0%A5%81%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%B2)

जमीन से जुड़े हुए आदिवासी समाज के महत्व के सन्दर्भ में भी उन्होंने अपना मत व्यक्त किया है। जमीन उसके समाज, संस्कृति और पहचान का एक हिस्सा है। विकास की अंधी दौड़ ने आज इन समुदायों के जीवन-गति पर रोक लगाया है। झूठे आश्वासन और सरकार की मिलीभगत ने झारखंड में बसे प्राकृतिक संसाधनों की भरपूर लूट और आदिवासियों को बेघर करने की भयावहता को कवयित्री ने अपनी कविता के माध्यम से कहने की कोशिश की है। बाहरी सत्ता का आदिवासियों के ऊपर हावी होना आदि बातों को कवि निर्मला पुतुल की कविताओं में देख सकते हैं।

आदिवासी समाज में श्रम का विशेष महत्व है। इस समाज में सहभागिता और सामूहिकता का दर्शन सहज ही दिखाई देता है। इसी सन्दर्भ में रमणिका गुप्ता का आदिवासियों की सामूहिकता के प्रति यह विचार है कि-

> दरअसल आदिवासी अपने श्रम के बल पर सदैव आत्मनिर्भर और स्वावलम्बी रहा है। अपने समूह और समाज से जुड़कर, प्रकृति का साथी बनकर जीना उसकी शैली और स्वभाव रहा है। (गुप्ता 2017:08)

आदिवासी कवि डॉ. रामदयाल मुंडा ने अपनी कविताओं के माध्यम से आदिवासियों द्वारा जीवन में विकास के नाम पर झेलने वाले शोषण को व्यक्त किया हैं। विकास के नाम पर होने वाले विनाश और इससे आदिवासी समाज में आने वाले विस्थापन ने इस समुदाय को पूरी तरह से समाप्त करने की स्थिति

बना दी है। प्रकृति का विनाश और मशीनी सभ्यता का प्रारम्भ इस समुदाय के लिए एक बड़ी त्रासदी मानते हुए उन्होंने 'विकास का दर्द' में लिखा है –

बन गया हूँ गीदड़
रहा दौड़ शहर की ओर
मरने के पहले या कि एक पेड़
विशाल साल का गिरा जा रहा चीरा
बीच मशीन आरा
देश के लिए कहते हैं विकास के लिए ....। (गुप्ता 2017:42)

इस प्रकार समग्रत: आदिवासी कवियों ने अपनी कविताओं में प्रकृति और आदिवासी समाज के बीच के गहरे सम्बन्ध को दर्शाया है। कहीं न कहीं आदिवासी जीवन दर्शन को ही कवियों ने दर्शाने का प्रयास किया है। प्रकृति के साथ मानवीय रिश्तों की पड़ताल भी आदिवासी कविताओं में देखा जा सकता है। भूमण्डलीकरण और पूंजीवादी व्यवस्था ने आदिवासियों के जंगलों पर लगातार हमला जारी रखा जिसके फलस्वरूप देशी-विदेशी कम्पनियों ने प्राकृतिक संसाधनों को भरपूर लूटा। विकास के नाम पर आदिवासी अंचलों में बड़े-बड़े उद्योगों के निर्माण किया गया। साथ ही खनिज पदार्थों के नाम पर खनन कार्य किय गया। इससे आदिवासियों को अपनी ही जमीन से विस्थापित होना पड़ा। आदिवासी लेखक हरिराम मीणा की कविता 'सभ्यता का विस्तार: एक हादसा" में पूंजीवाद और भूमंडलीकरण के बढ़ते प्रभाव के प्रति आदिवासियों को सचेत किया गया है –

देखो ! तुम्हारे पेड़ गिर रहे हैं
समुद्र मेला हो रहा है
तटों पर प्लास्टिक की थैलियाँ बिखरी हैं
मछलियाँ दूर चली गई...
देखों! आखिर तुम्हें खदेड़ ही दिया न
तुम्हारी जमीन से
तुम्हें नेस्तानाबूद करने के लिए
पर फिर भी तुम चुप हो?
क्यों आखिर क्यों?" (गुप्ता 2017:33)

आदिवासी काव्य में स्त्री जीवन को पर्याप्त स्थान दिया गया है। किसी भी समाज में स्त्री को धरोहर माना जाता है। पुरुषसत्तात्मक समाज में स्त्री के हक के लिए कवि मन की प्रगतिशील सोच एक समतामूलक समाज निर्माण के लिए अहम है। यहाँ आदिवासी स्त्री के सुख-दु:ख, आशा-निराशा से लेकर दिकु समाज द्वारा स्त्री को किस प्रकार शारीरिक और मानसिक शोषण का शिकार बनना पड़ता है आदि की अभिव्यक्ति हुई है।

सामजिक अधिकारों से वंचित आदिवासी स्त्री को लेकर सचेत आदिवासी कवयित्रियों की कविताओं में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है।

निष्कर्ष:

इस प्रकार देखा जा सकता है कि आदिवासी कवियों ने अपनी कविताओं में आदिवासियों के अतीत, वर्तमान और भविष्य को लेकर अपने विचार काव्य के धरातल पर प्रस्तुत किया है। इन विचारों में आदिवासी समाज के यथार्थ की मार्मिक अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। आदिवासी कवि आदिवासी समुदाय के सामाजिक-सांस्कृतिक विकास के नाम पर आदिवासी गाँव के बदलते तस्वीर, विस्थापन की समस्या, बाहरी सत्ता का आदिवासी समाज पर प्रभाव आदि बातों पर सविस्तार लिख रहे हैं। आदिवासी कविताओं के जरिए हमें यह जानकारी निश्चित तौर मिलती है कि आदिवासी पहचान आज दोहरी चुनौतियों से संघर्षरत है । नई आर्थिक नीति तथा भूमंडलीकरण और विकास की अंधी दौड़ के भयावह परिणामों का सामना आज इन समुदाय को ही करना पड़ रहा है। जंगलों की रक्षा जिनके पूर्वजों ने की उनको ही उन जंगलों से बेदखल होना पड़ रहा है। विकास के नाम पर खोखली परियोजनाओं के चलते आदिवासियों को आज किस तरह से शोषित और विस्थापित होना पड़ रहा है और उनसे परित्राण पाने के लिए किस तरह विरोध का साहस किया जा रहा है, आदिवासी कविताओं में इसे देखा जा सकता है ।

ग्रंथ-सूची:

गुप्त, रमणिका. आदिवासी स्वर और नई शताब्दी. आवृत्ति संस्करण. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2017.

टेटे, वंदना. आदिवासी साहित्य : परंपरा और प्रयोजन. प्रथम संस्करण. राँची: प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, 2013.

वेब लिंक :

- http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%B9%E0%A4%AE_%E0%A4%A7%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%80_%E0%A4%95%E0%A5%80_%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A1%E0%A4%BC_%E0%A4%B9%E0%A5%88%E0%A4%82_/_%E0%A4%B5%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A6%E0%A4%A8%E0%A4%BE_%E0%A4%9F%E0%A5%87%E0%A4%9F%E0%A5%87
- http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%85%E0%A4%AA%E0%A4%A8%E0%A5%80_%E0%A4%9C%E0%A4%BC%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8_%E0%A4%A4%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%B6%E0%A4%A4%E0%A5%80_%E

0%A4%AC%E0%A5%87%E0%A4%9A%E0%A5%88%E0%A4%A8_%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%80_/_%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%B2%E0%A4%BE_%E0%A4%AA%E0%A5%81%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%B2

****

संपर्क सूत्र:

डिम्पी बरगोहाँई

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग

मरिधल कॉलेज, धेमाजी, असम

चलभाष-6000820383

ई-मेल-dimpeeborgohain252@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 33-39

अज्ञेय की राजनीतिक आन्दोलन सम्बंधी कहानियाँ : एक अवलोकन

गीतांजलि दास

शोध-सार :

अज्ञेय का रचनाकाल राजनीति की दृष्टि से महत्वपूर्ण काल रहा है। अज्ञेय का प्रारम्भिक जीवन क्रांतिकारी दल के साथ व्यतीत हुआ था। इनके क्रांतिकारी जीवन की अवधि सन् 1929 से प्रारंभ होकर सन् 1936 तक है। अज्ञेय और उनके साथियों का पहला कार्यक्रम भगत सिंह को छुड़ाने के लिए आयोजित किया गया था। दूसरा कार्यक्रम 'दिल्ली हिमालय टॉयलेट्स फैक्ट्री' के बहाने बम बनाने का काम करने का था। उस फैक्ट्री में अज्ञेय वैज्ञानिक सलाहकार थे। तीसरा कार्यक्रम, अमृतसर में ऐसी ही और एक फैक्ट्री कायम करने का शुरू हुआ और यही देवराज और कमलकृष्ण के साथ 15 नवम्बर, 1930 को अज्ञेय गिरफ्तार हुए। अज्ञेय के यौवन का अधिकांश समय इस प्रकार जेल जीवन और क्रांतिकारी सहयोगियों के बीच गुजरा था। इसकी अभिव्यक्ति हम उनकी कुछ कहानियों में देख सकते हैं।

बीज-शब्द : *कहानी, राजनीतिक, आन्दोलन, इतिहास, आतंकवाद*

प्रस्तावना :

कहानी मानव-जीवन की समस्याओं, गतिविधियों को कम कलेवर में व्यक्त करनेवाली एक उत्कृष्ट विधा है। चूंकि साहित्य समाज का दर्पण है, लेखक समाज में व्याप्त वास्तविक स्थितियों को आधार बनाकर उन घटनाओं की साहित्यिक अभिव्यक्ति करता है। यद्यपि कहानी आकर में अपेक्षाकृत तौर पर छोटी होती है, परन्तु उसमें विवेचित यथार्थ को पाठकों के सामने एक गम्भीर प्रश्न बनाकर उन पर विचार करने को छोड़ जाती है। हिन्दी साहित्य के बहुआयामी व्यक्तिव्य के धनी रचनाकार 'अज्ञेय' (1911-1987) ने बाकी विधाओं के साथ-साथ कहानी विधा में भी अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है। उनकी कहानियों को विभिन्न कोटियों में विभाजित किया गया है। और यहाँ हम उनकी सड़सठ (67) कहानियों में से उन्हीं कहानियों पर विचार करेंगे जिन कहानियों में राजनैतिक आन्दोलन सम्बंधी बातों का उल्लेख मिलता है।

विश्लेषण :

क्रांतिकारी पात्रों के जीवन की दुष्कर पहलुओं का चित्र स्वाभाविकता के साथ तथा समय के सत्य के साथ खींचा गया है। उनकी राजनीतिक आन्दोलन सम्बंधी कहानियाँ इसप्रकार हैं –

1. **कड़िया** :

भारत में जो प्रसिद्ध किसान विद्रोह हुआ था, उस घटना को एक प्रेरणा-बिन्दु के रूप में लेकर इस कहानी की विषयवस्तु की रचना की गयी थी। कहानीकार के अंतिम संकेत से किसान विद्रोह का एक विस्तृत फलक उतर आता है, और साथ ही वहाँ के बड़े-बड़े किसानों ने सत्ताधारी ब्रिटिश लोगों के साथ मिलकर जो हत्याकाण्ड किया था, उसका चित्रण भी दिखाई पड़ता है। कहानी में सत्य नामक एक विद्रोही व्यक्ति सत्य को तीन साल की सज़ा मिली थी। जेल से रिहा होकर वह वापस आ रहा था। लारी में बैठकर वह एक ऐसा दृश्य देखता है कि उसका मन क्रोध एवं ग्लानी से भर जाता है -

> एक अधेड़ उम्र का आदमी, नंगे-बदन, हाथ में लाठी लिए दौड़ा जा रहा है, और बीच-बीच में एक वीभत्स हँसी हँसकर कहता जाता है, "वह पाया ! तेरी- !" और उससे कोई आठ-दस गज़ आगे एक देहाती युवती है– भय, पीड़ा, लज्जा, करुणा और एक अवर्ण्य भावना – एक बलिदान या अभिमान या दोनों की मुद्रा का एक जीवित पुंज लहँगे की परिमा में सिमटकर भागा जा रहा है। भागा जा रहा है जान लेकर। ओढ़नी का पता नहीं कैसे लहँगे का बोझ सँभाले हुए है – जब वह उछलती है, तो लहँगा कुछ उठ जाता है, घुटने तक उसकी टाँगें दिख जाती हैं – टाँगें भी पतली, बरसों की भूखी ! लारी आगे निकल गई और सत्य देखता रहा। (अज्ञेय 2019:198)

सत्य को लेने बहुत सारे मित्र आए। लेकिन सत्य अपना रास्ता चुन लेता है। सत्य उसी जगह की ओर जाता है जहाँ उसने एक घटना देखी थी। उस स्थान पर सत्य एक बूढ़े से मिलता है और उससे वह सब कुछ जान लेता है।

> हमारे गाँव में एक ही बड़े किसान हैं, बाकी हम तो सब गरीब लोग हैं। ये आस-पास के खेत उनके ही हैं। हमारा तो कहीं एक आध खेत होगा। जब बाढ़ आई, तो हम सब अपने अपने छप्पर इधर सड़क पर ले लाए। एक गरीब घर का छप्पर भी बह गया था। वे रात-भर भीगते बैठे रहे। उसके घर में एक लड़का बेराम था। उसकी माँ रोती थी। बाप तो कहीं काम को गया हुआ था। घर में मर्द कोई था नहीं, एक अकेली वह थी – उससे यह रोना देखा नहीं गया। वह साँस से बोली कि मैं थोड़े झाड़ू और नरसल ले आती हूँ, बच्चे के लिए छप्परिया छा लेंगे ... हमने थोड़ी देर बाद सुना कि उसकी चौधरी के बेटे से रार हो गई है ! वह पूछ रहा है कि मेरे खेत से मकई काट रही है ? तो वह जवाब देती है कि मैं नरसल काटने आई हूँ। वह गाली देता है कि साली, झूठ बोलती है, तो वह कहती है ज़बान सँभालकर

> बात करो। वह और गाली देता है तो वह माँ-बहिन की याद दिला देती है। (अज्ञेय 2019:205)

चौधरी को गुस्सा आ जाता है और उसे मारने के लिए पीछा करता है। उसने लाठी मारी लेकिन वह बच निकली। बाकी जो कुछ हुआ उसे सत्य ने भी देखा। वह बेचारी भागते-भागते झाड़ी में डूब गई और जब निकाली गई तब उसका बचना भी संभव नहीं था। उसी प्रांत में किसान विद्रोह हुआ था। और सत्य भी उसी विद्रोह में मारा गया था।

2. छाया :

इसमें एक विद्रोही भाई-बहन की कहानी को बहुत ही भावुकता पूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यह कहानी सुषमा और अरुण नामक भाई-बहन के क्रांतिकारी जीवन से सम्बद्ध है। सुषमा, शारदा की कहानी यानी अपनी कहानी के बारे में लिखती है।

> उस दिन, जब तुम और शारदा नाव में बैठकर झील के किनारे की गुफा में सामान इत्यादि छिपाने को घुसे थे, उसके बाद नाव उलट गई और तुम बाहर आए तो देखा शारदा का कोई पता नहीं है... वह सब मैं यहाँ बैठ स्मृति-पटल पर देख सकती हूँ, उसे दुहराने में कोई लाभ नहीं... पर शारदा नहीं डूबी थी। उसी टूटी नाव के एक तख्ते पर बहती हुई वहाँ से दस-बारह मील दूर किनारे लगी, दो दिन तक मछुए के झोंपड़े में रही, तीसरे दिन वहाँ से चलकर रात को अपने घर पहुँची। अभी घर के बाहर थी कि उसने घर से बहुत-से व्यक्तियों के रोने की आवाज़ सुनी। एकाएक किसी भयंकर आशंका से वह कांप गई, कहीं अरुण का कुछ अनिष्ट तो नहीं हुआ... पर रोनेवालों में उसने अरुण का स्वर सुना, और शांत होकर सोचने लगी- क्या यह रोना मेरे लिए तो नहीं है ? कैसी विचित्र दशा थी वह ! शारदा जीती-जागती बाहर खड़ी और अंदर लोग उसकी मृत्यु पर रो रहे थे ! फिर जैसी कि उसकी आदत है, उसने एकाएक निर्णय कर लिया। मुख मोड़कर वहीं से लौट गई। (अज्ञेय 2019:147)

शारदा अपने कार्य क्षेत्र से लौट आती और अरुण से दूर होने के लिए वह वहाँ से हटना चाहती थी, लेकिन अपने कर्तव्य का पालन भी करना चाहती थी।

> इसी दृढ़ निश्चय से वह कलकत्ता गई। वहाँ उसने एक छोटी-सी समिति स्थापित की और काम करने लगी... वह जो मोटर में से एक स्त्री और दो युवकों ने गोली चलाकर तीन-चार पुलिसवालों को घायल किया था, उसकी नेत्री शारदा ही थी।

> उसके बाद कलकत्ते के पास ही एक बम-दुर्घटना हुई थी, उसमें भी शारदा बाल-बाल बच निकली थी। फिर पटने में जो रात में बम गिरा था, वह भी उसी का काम था। पर उसके बाद न जाने कैसे, पुलिस को उसका पता लग गया, उसके वारंट निकल गए – दो- तीन विभिन्न नामों से। (अज्ञेय 2019:148)

यहाँ पर सुषमा के शारदा के नाम पर किए गए क्रांतिकारी कार्यों का ही परिचय मिलता है। अरुण के पकड़े जाने बाद सुषमा अपने ऊपर और भी कार्य भार ले लेती है। वह अरुण को इसप्रकार खत लिखती है–

> जब हमारा संगठन पर्याप्त हो गया, तब हमने कुछ और अस्त्र माँगने का विचार किया। इसके लिए धन की आवश्यकता थी, और वही प्राप्त करने के लिए मैं यहाँ आई थी। स्टेशन के पास पुलिस से मेरा सामना हो गया। मेरे पास दो रिवाल्वर थे और 36 गोलियाँ। मैंने सोचा आज पुराने अरमान निकाल लूँ। दो-दो बार मैंने रिवाल्वर खाली किए, तीसरी बार भरने का समय ही नहीं मिला... पर मुझे दु:ख नहीं है, मेरे वार खली नहीं गए। (अज्ञेय 2019:148)

अंतिम अनुरोध के रूप में सुषमा अपने भाई के लिए लिख भेजती है –

> तुम इस कहानी को सुनकर दु:खित होओगे, पर विचलित नहीं । (अज्ञेय 2019:149)

सुषमा को फाँसी पर लटकते देखकर उसका मन और दृढ़ हो जाता है।

3. द्रोही :

प्रस्तुत कहानी वस्तुतः एक विद्रोही की कहानी है, जिसने देश के विरुद्ध बयान दिया। इसमें प्रायश्चित करनेवाले व्यक्ति का चित्र उपलब्ध होता है। यद्यपि वह अपने को सहीं साबित करने के लिए अपनी ओर से बहुत कुछ तरकीबें निकालता है, फिर भी यह धारणा बनी रहती है कि वह द्रोही था। रघुनाथ नामक एक व्यक्ति यह सोचता है कि वह अपनी ही आँखों के सामने पतित होता जा रहा है। संसार के प्रति उसकी चेतावनी है –

> संसार मुझ पर हँसता है, मैं, संसार पर हँसूँगा। वह मेरी उपेक्षा करता है, मैं उसकी उपेक्षा करूँगा। इतनी महती शक्ति मुझे आश्रय दे रही है, मेरी रक्षा कर रही है, फिर मुझे किस बात का डर है ? मैं कायर पुरुष नहीं हूँ, विश्वास-घातक नहीं हूँ। जिस शक्ति ने मुझे शरण दी है, उसके प्रति मेरा जो प्रण है, उसे पूर्ण करूँगा। (अज्ञेय 2019 :78)

लेकिन इतने पर भी उसका हृदय नहीं मानता है और वह अपने हृदय की गहराई से बातें करता है, जिसमें पश्चाताप है –

> मैंने एक बार, अस्थायी जोश में आकर राजद्रोह करने का और करवाने का बीड़ा उठाया था। पर वह तो यौवन की एक उमंग थी, हृदय का एक उद्गार था,उमंग आई और चली गई, उद्गार उठा और मिट गया। उस एक बात के लिए क्या मैं सदा के लिए द्रोही हो जाऊँगा ? और फिर मैं उसका समुचित प्रायश्चित भी कर रहा हूँ। (अज्ञेय 2019 :78)

रघुनाथ यही चाहता है कि वह सच्चे अर्थ में एक देशभक्त हो, दिखाने के लिए नहीं और जो दिखाने के लिए करता है उनके प्रति घृणा भी प्रकट करता है। आगे वह कहता है –

> देशभक्त ? नहीं, हमें देशभक्त कहलाने की चाव नहीं है । देशभक्ति उन्हीं को मुबारक हो जो पिकेटिंग करके दो महीने जेल में काट आते हैं, और फिर आयु भर उसकी याद इठलाते फिरते हैं – "अजी जेल की क्या पूछते हो ! हमने जो देखा सो हमीं जानते हैं ! (अज्ञेय 2019:79)

एक सच्चे विद्रोही का पतन इस कहानी की विषय वस्तु है। अपनी पतित अवस्था से उठने का उसका मन नहीं है। वह उसी अवस्था में रहना चाहता है। तब वह एक कुंठा ग्रस्त विद्रोही का रूप धारण कर लेता है। उसका अंतिम कथन इसका साक्ष्य है –

> मेरा भाग्य-निर्णय हो गया है, मेरा इस प्रवाह के विपरीत चलने की स्पर्धा करना बेवकूफी है। मैं कुछ नहीं करूंगा, वह जाऊंगा !
>
> क्यों ? मैं द्रोही था, द्रोही हूँ, द्रोही ही रहूँगा ! (अज्ञेय 2019:94)

यद्यपि इस कहानी में पात्र के विद्रोही जीवन का राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में चित्र उपलब्ध नहीं है, फिर भी पतन की ओर उन्मुख एक विद्रोही का चित्र होने के कारण यह कहानी राजनैतिक कहानियों के अंतर्गत शामिल किया गया है।

4. कोठरी की बात :

इस कहानी में दो भावुक युवकों का चित्र मिलता है। एक हद तक दोनों विद्रोही हैं। लेकिन विद्रोह भावना से बढ़कर उनमें भावुकता ही अधिक झलकती है।

> जो 'स्वभावतः विद्रोही' होते हैं, उनकी विद्रोह-चेष्टा बौद्धिक नहीं होती, उसका मूलोद्भव एक भावुकता से होता है। कभी वह भावुकता बौद्धिक विद्रोह से परिपुष्ट भी होती है ,तब वह विद्रोही अपनी छाया देश और काल पर छोड़ जाता है। पर बहुधा ऐसा नहीं होता, बहुधा भावुक विद्रोही समय के किसी बवंडर में फँसकर खो जाते हैं – क्योंकि भावुकता स्वंय एक बवंडर है... (अज्ञेय 2019:433-434)

सुशील के लिए और कोई रास्ता नहीं था। उसके घर के वातावरण के चलते वह विद्रोही बन गया। एक ऐसी घटना, एक ऐसी प्रतिस्पर्धा जिसकी वजह से सुशील को विद्रोही बनना पड़ा।

> एक वह क्षण जब वह और उसकी बहिन पास-पास लेटे हुए किसी विचार में निमग्न हैं – शायद अपने उस समीपत्व के पवित्र, रहस्यमय सुख में, और जब उसके पिता एकाएक आकर उसे उठा देते हैं, फटकारते है कि वह अपनी बहिन के पास क्यों लेटा है, और एक ऐसी क्रुद्ध, संदेहपूर्ण, जुगुप्सा-मिश्रित ईर्ष्यावाली और इतनी विषाक्त दृष्टि से उनकी ओर देखते हैं कि उसके मन में कोई पर्दा फट जाता है। (अज्ञेय 2019:434)

एक ओर सुशील अति-भावुक युवक है। इसलिए वह विद्रोह को एकमात्र रास्ता चुन लेता है। जेल की एकान्त परिस्थिति में अपनी बहन की स्मृति को रूपायित भी करना चाहता है। वह कहता है –

> मैं निहिलिस्ट नहीं हूँ, मैं रोमांटिक नहीं हूँ। मुझे आत्मपीड़न में ऐंद्रियक सुख नहीं मिलता, मुझे गौरव का उन्माद भी नहीं हुआ है। पर मेरी परिस्थिति एक ऐसी अपरिवर्त, तुषारमय, अमोघ अनिवार्यता है कि मुझे और कोई उपाय सूझता ही नहीं, जिससे कुछ लाभ हो सकें... (अज्ञेय 2019 :438)

सुशील का विद्रोही होना उसकी अपनी अन्तिम नियति है। वह खुद स्वीकार करता है कि उसके लिए और कोई उपाय नहीं था। इस कहानी का और एक पात्र है दिनमणि, जिसने झूठे सामाजिक मुखौटा को तोड़ना चाहा। लेकिन इन सब में उसने अपने आपको असमर्थ पाया। उसको राजनैतिक खून के मामले में जेल में भी डाला गया था। उसकी आत्मा ने कभी हिंसा नहीं की, कभी अत्याचार नहीं किया, यद्यपि उसके हाथों अवश्य ही कई मृत्युएँ हुई होंगी। प्रस्तुत कहानी में दोनों ही पात्र भावुक हैं। दिनमणि की विद्रोह भावना झूठे सामाजिक वातावरण में जी कर कुंठित हो जाती है और दूसरी तरफ सुशील पारिवारिक कुंठा की वजह से विद्रोही बन जाता है।

इसी प्रकरण के अन्तर्गत हम कुछ ऐसी कहानियों को भी ले सकते हैं, जिन्हें राजनीतिक आन्दोलन सम्बंधी कहानियों के अन्तर्गत मानना उचित नहीं है ; लेकिन इसके पात्र विद्रोह भावना से संचालित है। जीर्ण सामाजिकता के सामने एक प्रश्न चिह्न बन कर खड़े होते है। 'पगोड़ा वृक्ष' की 'सुखदा', 'शत्रु' का 'ज्ञान' जैसे पात्र इसके उदाहरण है।

निष्कर्ष :

अज्ञेय का प्रारम्भिक जीवन क्रांतिकारियों के संग बीता था। इसलिए इस तरह की कहानियाँ लिखने के प्रति अज्ञेय की प्रबल आग्रह दृष्टिगोचर होता है। यहाँ यह कहा जा सकता है कि अज्ञेय की कहानियों की पृष्ठभूमि भारत की स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि रही है। अज्ञेय का अनुभव ज्ञान इसमें मिला हुआ है। अज्ञेय ने क्रांतिकारी जीवन के विभिन्न पहलुओं को वैयक्तिक धरातल पर देखा था। उनकी कहानियों का मूल स्रोत विद्रोह है। उनका विद्रोह दर्शन सभी कहानियों का प्रेक्ष्य-बिन्दु है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अज्ञेय ने गाँधीवादी न रह कर क्रांतिकारी रहना पसन्द किया था। अतः अज्ञेय की बहुत सारी कहानियाँ हमारे राष्ट्र की राजनैतिक हलचल की पृष्ठभूमि में लिखी गई थी।

ग्रंथ-सूची:

वात्सायन, साच्चिदानंद हीरानंद, 'अज्ञेय' की संपूर्ण कहानियाँ. दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज, 2019.

****

सम्पर्क सूत्र :

गीतांजलि दास

शोधार्थी,हिन्दी विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय

चलभाष – 9706458806

ई-मेल: geetdas51@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 40-48

भूपेन हाजरिका के गीतों में आत्मनिर्भरता की चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

पूजा बरुवा

शोध-सार :

आत्मनिर्भरता का अर्थ है किसी अन्य पर निर्भर न होकर स्वयं अपनी कुशलता एवं श्रम से कार्य करना। आत्मनिर्भर व्यक्ति ही अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा कर सकता है। किसी भी देश, राज्य या समाज के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है कि युवा वर्ग आत्मनिर्भर बनें तथा श्रम को महत्व दें। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की कई संभावनाएँ हैं। खासकर पूर्वोत्तर का प्रमुख राज्य असम कई संभावनाओं से परिपूर्ण हैं। वर्तमान समय में तो पूरे भारत को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जा रहा है, लेकिन आत्मनिर्भरता की आवश्यकता को समाज-सचेत गीतकार भूपेन हाजरिका बहुत पहले ही समझ चुके थे। उनके 'ऑटोरिक्सा चलाओँ', 'कर्म्मइ आमार धर्म्म', 'मेघे गिर् गिर् करे', 'आमि भाइटि-भनटि' आदि गीत इसका प्रमाण है। अपने गीतों के माध्यम से गीतकार ने असम के युवाओं को उनकी क्षमता पर यकीन दिलाया है और परोमुखोपेक्षित होने के स्थान पर स्वयं कुछ करने की प्रेरणा दी है। साथ ही आत्मनिर्भरता के मार्ग पर चलने के लिए जनता को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, उनका भी चित्रण उन्होंने अपने गीतों में किया है।

बीज शब्द : *गीत, आत्मनिर्भरता, कृषि, बेरोजगारी, श्रम, चुनौतियाँ, संभावनाएँ*

प्रस्तावना :

असमीया साहित्य-संस्कृति, समाज, कला आदि के क्षेत्र में भूपेन हाजरिका का विशेष अवदान रहा है। असमीया जातीय-जीवन को समृद्ध बनाने में भी उन्होंने अहम भूमिका निभाई है। अपने गीतों के माध्यम से उन्होंने असमीया जनता को जागरूक बनाया है तथा स्थिति में परिवर्तन लाकर अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए प्रेरित भी किया है। आत्मनिर्भरता भी उनके गीतों में प्रतिफलित एक ऐसा ही पक्ष है। जिसके माध्यम से उन्होंने जनता को युगीन समस्याओं से रू-ब-रू करके आगे बढ़ने का मार्ग सुझाया है। इसी कारण वर्तमान समय में भी उनके गीत प्रासंगिक है। किसी भी समाज, राज्य या देश के सर्वांगीण विकास के लिए युवा वर्ग का आत्मनिर्भर बनना महत्वपूर्ण है। असम जैसे कृषिप्रधान राज्य में आत्मनिर्भरता का प्रमुख साधन है खेति करना। युवा वर्ग अगर अपनी क्षमता को पहचानकर खेति करेंगे तथा सरकारी नौकरी न मिलने पर बैठे रहने के बजाय आत्मनिर्भरता का मार्ग खोजेंगे तो देश का विकास निश्चित है।

विश्लेषण :

भूपेन हाजरिका एक युग-सचेत गीतकार थे। उनमें जनता के कल्याण की विचारधारा सक्रिय थी। अपने गीतों के माध्यम से जन-जीवन से जुड़े समस्याओं एवं संघर्षों का सही और प्रभावी चित्रण करने में वे सक्षम थे। भूपेन हाजरिका ने समाज की बेरोजगारी की समस्या को भी अपने गीतों के माध्यम से दर्शाया है और जनता को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित किया है। उनके 'अटोरिक्सा चलाओँ' शीर्षक गीत असम की बेरोजगारी समस्या का प्रमाण है। अर्थनीति विषय में स्नातकोत्तर उत्तीर्ण युवक द्वारा नौकरी के अभाव में अटोरिक्सा चलाकर जीवन व्यतीत करना दुर्भाग्य का विषय है। उनके अनुसार सरकार इस समस्या का समाधान करने में असमर्थ है और इसीलिए सरकारी नौकरी की तलाश करने के बजाय अगर युवा वर्ग श्रम को महत्व देकर खुद कुछ करने का प्रयास करें तो वे अवश्य सफल होंगे। एम.ए. पास करके सरकारी नौकरी की आस न करके ऑटोरिक्सा चलाकर जीवन जीनेवाले युवक की वे सराहना करते हैं –

भाल करिलि भाइ भालेइ करिलि

भाबी भाइबोवारीलै आशिस अपार

हाकिम मंत्रीर चाकरि बिचारि तइ

नहलि ये भाग्ये चिरबेकार !!! (हाजरिका2008:1060)

भावार्थ – भाई! ऑटोरिक्सा चलाकर तूने सही किया है। होनेवाली देवरानी को भी आशीर्वाद देता हूँ। अच्छा हुआ कि हकीम, मंत्री की नौकरी ढूँढते हुए तू बेकार नहीं बना।

उन्होंने श्रम को मर्यादा देते हुए अटॉरिक्सा चालक के मुख से अपने काम के प्रति गौरव का भाव भी दर्शाया है। खुदको उच्च शिक्षित समझकर कुछ न करके बैठे रहने के बजाय जो काम मिले उसे निष्ठा से करने पर वे अधिक बल देते थे –

अटॉरिक्सा चलाओँ

आमि दुयो भाइ

गुवाहाटी करि गुलजार।

बि-इ फेल मइ

सरु भाइ एम-ए पास

बेंकत बहुतो धार।

....

शिक्षित बेकारर

मइ-सरु भाव

कमप्लेक्स नाइ आमार। (हाजरिका2008:1060)

भावार्थ – हम दो भाई पूरी गुवाहाटी में अटॉरिक्सा चलाते हैं। मैं बि-इ फेल हूँ और मेरा भाई एम.ए पास है। बेंक में हमारा काफी उधार है। लेकिन शिक्षित बेरोजगारों का कोई छोटा या बड़ा भाव हममें नहीं है।

भूपेन हाजरिका ने अपने गीतों के माध्यम से युवाओं को निराश न होकर कृषिप्रधान समाज की परम्परा की रक्षा करने का आह्वान किया है। 'मेघे गिर् गिर् करे' शीर्षक गीत में उन्होंने खेति को युवाओं के लिए आत्मनिर्भरता के साधन के रूप में प्रस्तुत करते हुए उन्हें खेति करने के लिए प्रेरित किया है –

बहु दिने छन परा, मोर गाँवर माटिडरा

चह करि सेउज करिम, आनन्दे नधरा। (हाजरिका 2008:1123)

भावार्थ – बहुत दिनों से सूखी पड़ी मेरी गाँव की जमीन को हम खेति करके हरा-भरा बना देंगे।

भूपेन हाजरिका बेरोजगार युवाओं को आत्मनिर्भर बनते देखना चाहते थे। वे मानते थे कि देश के युवा नौकरी के अभाव में हाथ पर हाथ धरे दूसरों से किसी सहायता की आशा न रखते हुए अपनी जमीन में खेति करके खुद निम्नतम खाद्य पदार्थों को उगाकर, उन्हें बेचकर अपने अभाव कम कर सकते हैं। इसीलिए 'आमि भाइटि-भनटि' शीर्षक गीत में उन्होंने देश के युवाओं को हाथ में खुरपी लेकर खेति करके आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा देते हुए लिखा है –

एइया आमार माटि

पाचलिरो दाम बाढ़िछे

हातत लोवा खन्ति

नकटाबा क्षणटि

लाइ पालेङ धनियारे

बारी करा भर्त्ति। (हाजरिका2008:1019)

भावार्थ – यह हमारी जमीन है। बाजारों में सब्जियों की कीमतें भी बढ़ने लगी हैं और इसीलिए तुमलोग अपनी जमीनों पर खेति करने के लिए हाथ में खुरपी उठाओ। समय मत गवाओ। पालक-धनिया आदि से अपना खेत भर दो।

खेति करके आत्मनिर्भर बननेवाले युवाओं की सराहना करते हुए 'आँ आमि तेजाल गाँवलीया' शीर्षक गीत में ग्रामीण युवक-युवतियों को खेति करके आगे बढ़ते देख गीतकार को काफी प्रसन्नता हुई है –

आँ आमि तेजाल गाँवलीया

गाँवरे राखिम मान।

नाङ्ल-युवलिरे पृथिवी सजाऔँ

रदत तिरेबिराय जान। (हाजरिका2008:1008)

भावार्थ – हम ओजस्वी ग्रामवासी हैं। हम अपने गाँव का मान रखेंगे। हल जोटकर दुनिया सजायेंगे। कड़ी धूप में मेहनत करेंगे।

'आमि असमीया नहऔँ दुखीया' शीर्षक गीत में उन्होंने असम के भविष्य के रूप का चित्रण कर अपनी सामाजिक चेतना का ही परिचय दिया है। वे अनुभव करते थे कि असमीया जाति अगर अपने बीच ही लड़ती-झगड़ती रहेगी तो जाति का संकट निश्चित है –

आमि असमीया नहऔँ दुखीया

बुलि सान्तना लभिले नहब

आजिर असमीयाइ

निजक निचिनिले

असम रसातले याब।

....

आजिर असमीयाइ निजक नबचाले

असमते भगनीया हब। (हाजरिका2008:1065)

भावार्थ – हम असमीया कभी गरीब नहीं होंगे, यह सोचकर सांत्वना लेने से नहीं होगा। अगर आज के असमीया खुद को नहीं पहचानेगा तो असम का पतन होगा। आज के असमीया अगर खुद को नहीं बचायेंगे तो असम में ही भिखारी बनकर रह जायेंगे।

अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु हमें आत्मनिर्भर बनना ही होगा। अगर प्रत्येक असमीया यह सोचेगा कि हमारे पास सबकुछ है और हाथ पर हाथ धरे बैठा रहेगा तो हमारा पतन स्वाभाविक है। इसीलिए समाज सचेत गीतकार ने सबसे यह आग्रह किया है कि हर कोई आत्मनिर्भर बने और देश के विकास में अपना योगदान दे।

शारीरिक श्रम के बिना समाज की आर्थिक उन्नति की कल्पना नहीं की जा सकती है। भूपेन हाजरिका ने श्रम को काफी महत्व दिया है। उनके अनुसार कोई भी काम बड़ा या छोटा नहीं है। उन्होंने श्रम के माध्यम से सुन्दर समाज का निर्माण कर प्रगति की राह पर कैसे बढ़ा जा सकता है उसे स्पष्ट किया है। उनके अनुसार चोरी-डकैटी या दुष्कार्य से काला धन कमाने के बजाय श्रम करके जीवन जीना अधिक श्रेष्ठ है। 'घर आमार माटि हय' गीत में वे लिखते हैं –

चोरांग कॉला बजारते बहु कॉला धन पाबा

एन्धार एन्धार गुदामते कुबेररो धन पाबा

तेने पापी कुबेरर नहओँ आमि अनुचर

खाटि खाटि अर्ज्जा दुटि शुदा-निका भात

एयोर माथोन कापोर थाके यदि एइ गात

तेतियाइ पाओँ देखोँ प्रेरणा मनर। (हाजरिका2008:1069)

भावार्थ – कालाबाजारों में काला धन मिलेगा, अन्धेरे गोदामों में कुबेर का धन मिलेगा, वैसे पापी कुबेरों के हम कभी अनुचर नहीं बनेंगे। बस मेहनत से कमाया हुआ सूखा भात और पहनने के लिए एक जोड़ी कपड़ा मिल जाए तो उसीसे मन को प्रेरणा मिलती है।

भूपेन हाजरिका के अनुसार कर्म ही सबसे बड़ा धर्म है। वे युवाओं को उच्च शिक्षित होकर नौकरी न मिलने पर निराशा न होकर निज कर्म के बल पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हुए 'कर्म्मइ आमार धर्म्म' शीर्षक गीत में लिखते हैं –

कर्म्मइ आमार धर्म्म

आमि जीवन-युँजत

जिकिब लागिब

पिन्धि साहसर बर्म्म। (हाजरिका2008:1009)

भावार्थ – कर्म ही हमारा धर्म है। हमें साहस का कवच पहनकर जीवन-संग्राम में जीतना होगा।

भूपेन हाजरिका आत्मनिर्भर पर बल तो देते हैं; लेकिन साथ ही इस लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग में उत्पन्न बाधाओं का जिक्र करना भी नहीं भूलते हैं। एक ऐसी ही बाधा है उच्च वर्ग का शोषण। उच्च-नीच, अमीर-गरीब को लेकर समाज में जो वैषम्य है उनके कारण एक वर्ग आगे नहीं बढ़ पाता है। समाज के उच्च वर्ग के पास सभी साधन उपलब्ध होते हैं लेकिन वे निम्न वर्ग को कभी भी आत्मनिर्भर बनने नहीं देते। उच्च वर्ग अपनी क्षमता का दुर्पयोग करके किसानों को उनके अधिकारों से वंचित करते आये हैं। गरीब किसान जी तोड़ मेहनत करके धान उगाते हैं, खेति करते हैं, लेकिन धान बेचने पर उन्हें श्रम के हिसाब से धन नहीं मिलता। कृषिप्रधान राज्य असम में भी किसान शोषित, लांछित, वंचित हैं। 'पेही ओ पेहा' शीर्षक गीत में भूपेन हाजरिका लिखते हैं –

तुमि रोवा धान घाम पेलाइ, पाब लागे दाम,

श्रमर जुखाइ

तोमाक शोषण यिजने करे, नरकतो नेपाय

सेइ जने ठाइ। (हाजरिका2008:1086)

भावार्थ – तुम खून-पसीना बहाकर धान उगाते हो और इस श्रम के बदले उचित धन मिलना तुम्हारा अधिकार है। जो तुम्हारा शोषण करता है, उसे नरक में भी जगह नहीं मिलेगी।

सरकार की असफलता से जनता की अवस्था दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही है, लेकिन स्थिति को ठीक करने के विपरीत देश के नेता देश को ही लूट रहे हैं। असम की जुलाहिनों में इतनी प्रतिभा है कि वे कपड़े बुनकर अपना तथा अपने परिवारवालों का भरण-पोषण कर सकती है, लेकिन सरकार की उदासीनता तथा साधन के अभाव से उन्हें तकलीफ उठानी पड़ती है। 'उजाइ बुरे दिले' गीत में भूपेन हाजरिका ने लिखा है –

ताँतीरे कापोरे जगतखन जुरिले

तथापि ताँतीर गा उदि

डा-डाङरीयाइ देशके ठगिले

करिनो कतना बुधि। (हाजरिका2008:1023)

भावार्थ – जुलाहिनों द्वारा बनाये गये कपड़ो से पूरी दुनिया के बदन ढकते हैं, लेकिन उनके शरीर हमेशा नंगे रहते हैं। शासकों ने अनेक चाले चलकर देश को ही ठगा है।

आवश्यकीय वस्तुओं अथावा किसी उत्पाद के लिए आवश्यक कच्चे माल की बढ़ती कीमत के कारण भी गरीब लोग प्रतिभा या मौलिक सोच के होने पर भी पीछे रह जाते हैं। 'छागर छाल छेलाबर डबुवा कटारी' शीर्षक गीत में महंगाई से पीड़ित गरीब जुलाहिन की दुखद स्थिति का चित्रण करते हुए भूपेन हाजरिका लिखते हैं –

शुदा शुदा माकोटि खट् खट् चले

बोवनीये हैँपाहेरे चानेकी लले

कॉला कॉला बजारत, सूतार दाम देखि

दुखुनीये पाइछे शोक। (हाजरिका2008:1013)

भावार्थ – सूत के अभाव में खाली हथकरघा खट् खट् बजता रहता है। जुलाहिनों ने कपड़े बुनने के लिए उत्साह से नमूने लिये हैं। लेकिन कालाबाजार में सूत की अधिक कीमत देखकर उनका मन दु:खी हो गया है।

खेत किसान की सबसे बड़ी सम्पत्ति होती है, उसी से उन्हें जीने की प्रेरणा मिलती है। खेत में अनाज उगाते हुए किसान अपना खून-पसीना एक कर देते हैं। लेकिन इस मेहनत का फल भोगने से पहले ही महाजन द्वारा उनसे अनाज छीन लिया जाता है। 'ऑ मोर धरित्री आइ' शीर्षक गीत में जमींदार-महाजन वर्ग के इसी शोषण का यथार्थ चित्रण करते हुए भूपेन हाजरिका इसप्रकार लिखते हैं –

रद बरषुण काति करि

घाम पेलाइ चह करि

तोमार बुकुर सोण चपाऔँ

आने निये काढ़ि।(हाजरिका 2008:1138)

भावार्थ – हम धूप और बरसात में भी मेहनत से खेति करते हैं लेकिन उस अनाज को दूसरे हमसे छीन लेते हैं।

भिन्न प्राकृतिक आपदाओं के कारण भी आत्मनिर्भरता की राह में बाधा उत्पन्न होता है। असम में हर वर्ष बाढ़ आती है जिसके कारण खेत को काफी नुकसान पहुँचता है, किसान की मेहनत पानी बहाकर ले जाता है। 'एइ पानी' शीर्षक गीत में गीतकार लिखते हैं –

एइ पानी त्रासर

एइ पानी बेजारर

एइ पानीये कृषकक

पथाररपरा काढ़ि नि

मृतदेहलै परिणत करे। (हाजरिका 2008:1141)

भावार्थ – यह पानी त्रास का है, दु:ख का है। यह पानी किसानों को उनके खेतों से छीनकर लाशों में बदल देता है।

गीत सभी वर्ग के लोगों को या एक विराट समुदाय को प्रभावित कर सकता है, इसीलिए भूपेन हाजरिका ने अपने गीत लिखते समय यह ध्यान रखा है कि उनके गीत समाज में परिवर्तन लाने का एक माध्यम बन सकें। अपने समकालीन समाज में उन्होंने ऐसी कई समस्याएँ देखी हैं और उन्होंने केवल उन समस्याओं का चित्रण ही नहीं किया; बल्कि कुछ समस्याओं के समाधान के मार्ग भी सुझाए हैं। समाज में फैली बेरोजगारी, महंगाई जैसी समस्याओं से पीड़ित असमीया युवाओं को निराशा की गर्त से निकालकर उनके मन में आशा का दीप जलाने का काम करते हैं उनके गीत। वे मानते थे कि इन समस्याओं का अन्त करने का अन्यतम मार्ग ही है आत्मनिर्भर बनना। चाय के बागानों में, भिन्न कारखानाओं में काम करनेवाले मजदूर, मछुवारे, ढाक बजानेवाले, पत्थर तोड़नेवाले, पालकी उठानेवाले, रेल में काम करनेवाले, कपड़े बुनकर अपना जीवन व्यतीत करनेवाले सभी को उन्होंने अपने गीतों में स्थान दिया है। आत्मनिर्भरता की राह पर उच्च वर्ग बाधा बनते हैं और वे उन्हें श्रम का उचित दाम नहीं देते। भिन्न प्राकृतिक आपदाएँ तथा आवश्यक साधनों के अभाव के कारण भी असम के लोग आत्मनिर्भर नहीं बन पाये हैं, लेकिन असम या पूर्वोत्तर भारत में कृषि एक ऐसी आजीविका है जो आत्मनिर्भर बनने में मदद करता है। सरकार की अकर्मण्यता या उदासीनता को दोष देने के बजाय अगर प्रत्येक व्यक्ति अपने सामर्थ्य के अनुसार कार्य करेंगे तो

देश की प्रगति निश्चित है। वे चाहते थे कि शिक्षित युवा किसी भी काम को छोटा न समझे। दूसरों के मुँह से अन्न छीनकर अमीर होने के बजाय वे स्वयं अपने दम पर कुछ करें।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के उपरांत यह कहा जा सकता है कि भूपेन हाजरिका एक ऐसे गीतकार हैं, जिनके गीतों में समाज की विसंगतियों के यथार्थ चित्रण के साथ-साथ उनमें संस्कार लाने का मार्ग भी देखने को मिलता है। समाज के प्रत्येक पक्ष के प्रति उनका दृष्टिकोण, निर्मोह विश्लेषण आदि ने उनके गीतों को यथार्थ रूप दिया है। कहा जा सकता है कि भूपेन हाजरिका के गीतों में आत्मनिर्भरता, उसके अवसर तथा चुनौतियों का यथार्थ चित्र विद्यमान हैं।

संदर्भ-सूची :

हाजरिका, सूर्य, (संपा). डॉ. भूपेन हाजरिका रचनावली (द्वितीय खंड). गुवाहाटी: एस.एइस शैक्षिक न्यास, 2008

हाजरिका, सूर्य, (संपा). मइ एटि यायावर : डॉ. भूपेन हाजरिकार अनुलिखित आत्मजीवनी. चौथा. गुवाहाटी: एस.एइस शैक्षिक न्यास, 2013

****

सम्पर्क सूत्र :

पूजा बरुवा

हिन्दी विभाग,नगाँव महाविद्यालय (ऑटोनोमस)

नगाँव, असम

पिन-782001

चलभाष-8822864938

ई-मेल- pujabaruah7274@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 49-60

'मुझे पहचानो' : लांछित कुलदेवी और जीवित सती की दास्तान

डॉ. संजीव मंडल

शोध-सार :

संजीव का 'मुझे पहचानो' उपन्यास अमानवीय परंपराओं की क्रूरता और निरर्थकताओं पर गहरी चोट करता है। इसका मुख्य विषय सती दाह जैसी प्रथा की क्रूरता का चित्रण करते हुए उस पर व्यंग्य करना है। मध्यम कलेवर की यह रचना पाठकों को शोकमग्न कर देती है। साथ ही पाठकों को लोगों की संवेदनाशून्यता से रूबरू करा कर उन्हें संवेदनशील बनाती है। कथा का केंद्र है कंठा रियासत। रियासत के बीच से बहती कुँआरी नदी। यहाँ राय साहब और लाल साहब दो सौतले भाइयों का राज चलता है। दोनों झूठी शान की जिंदगी बीता रहे हैं। कथानायक मनोज और उसका दोस्त दुबे क्रमश: लाल साहब और राय साहब के मैनेजर के तौर पर काम करते हैं। दोनों पर भार है मालिकों की आमदनी बढ़ाने का। लाल साहब और राय साहब दोनों चुनाव लड़ना चाहते हैं। इसके लिए डोनेशन के तौर पर राजनीतिक पार्टियों को मोटी रकम देने की जरूरत है। यह मोटी रकम की व्यवस्था करने का दायित्व मैनेजरों पर छोड़कर वे अपनी झूठी शान की जिंदगी जीतते रहते हैं। मनोज को रियासत में आकर कुलदेवी कुँआरी और सती बना दी गई सावित्री की बात पता चलती है। मनोज दोनों के बारे में जानने के लिए रियासत के जानकार और बुजुर्ग लोगों के पास जाता है। और तब खुलती है पूरी कहानी। जिस कुँआरी के भले कर्मों को देखकर रियासत का हर व्यक्ति उसे कुलदेवी की तरह पूजता है, उसी कुँआरी ने अपने पुत्र और पुत्रवधू की अवमानना का शिकार होकर आत्महत्या की। राय साहब के छोटे भाई की मृत्यु पर उसकी पत्नी सावित्री को सती किया गया। पर वह किसी तरह बच गई। उपन्यास में कुलदेवी कुँआरी और सती सावित्री की कहानी आकर्षण के प्रमुख कारण हैं। साथ ही रत्नों की पट्टी पर बसे कंठा रियासत में रत्नों की तलाश में पागल हो गये लोगों की कहानी भी यह उपन्यास कहता है।

बीज-शब्द : *कुलदेवी, सती, लाल साहब, राय साहब, झूठी शान, रियासत*

प्रस्तावना :

संजीव का उपन्यास 'मुझे पहचानो' एक जीवित सती की दर्दनाक दास्तान है। साथ ही यह एक कुलदेवी तुल्य महिला की अपनों द्वारा लांछना की कहानी भी है। पति की आकस्मिक मृत्यु पर जोर जबरदस्ती सती बनने के लिए पति के शव के साथ चिता पर चढ़ा दी गई सावित्री की कहानी पढ़कर हम

आतंक से थर्राते हैं, करुणा से गल जाते हैं, वेदना में छटपटाते हैं और क्रोध से बौखलाते हैं। कुलदेवी तुल्य महिला कुँआरी अपने पुत्र और पुत्रवधू द्वारा जिस तरह से लांछित होती है वह बहुत ही पीड़ादायक तथा दुर्भाग्यपूर्ण है। इस उपन्यास के लिए संजीव को हिंदी साहित्य का 2023 का साहित्य अकादेमी पुरस्कार दिया गया है।

विश्लेषण :

इस उपन्यास की कथा की शुरुआत होती है दुबे द्वारा मनोज सिंह को रियासत कंठा से रूबरू कराने के दृश्य के साथ। दो पहाड़ियों के बीच फैली है कंठा रियासत। बीच से बहती है एक नदी। नदी के उस पार विजयगढ़ है और इस पार अजयगढ़। राजा उदय प्रताप सिंह की यह रियासत उनकी मौत के बाद दो हिस्सों में बँट गयी। अपनी पत्नी से दो पुत्र राजा साहब को हुए। बड़े बेटे को बड़े राय साहब और छोटे को छोटे राय साहब कहा जाता है। कुँआरी नामक एक बेड़िन को रखैल बनाने के लिए राजा साहब लाये थे, पर उस कुँआरी ने शर्त रखी कि उससे ब्याह करना पड़ेगा तभी वह राजा साहब के साथ रहेगी। मनोज और दुबे इस कुँआरी के बारे में ठीक से जानने के लिए विजयगढ़ के सबसे बुजुर्ग इंसान खलील मियाँ के पास जाते हैं और खलील मियाँ कुँआरी के रहस्य को खोलते हुए कहते हैं –

> कुँआरी, मुझे ठीक-ठीक इल्म नहीं, लोग कहते हैं, वह कंठा के ताल से निकली थी। नाचती तो तारे झरते। हँसती तो फूल खिलते। राजे-रजवाड़े उसकी हर अदा पर निहाल ! तो मैं क्या कह रहा था, हाँ कुँआरी पहली लड़की थी जिसने बेड़िन का पुश्तैनी काम करने से इनकार किया। हसीन इतनी कि हर जवाँ इसे लूट लेने को बेताब। आप जानो कि हर शिकार में छीना-झपटी होती है, यहाँ भी होती रही। विजयगढ़ की ड्योढ़ी पर पाँव रखने से पहले तीन-तीन ड्योढ़ियाँ लाँघ चुकी थी। आखिरकार विजयगढ़ की ड्योढ़ी पर कदम रख कर अड़ गयी, क्या शान थी, कहा, 'ड्योढ़ी के अंदर कदम तभी रखूँगी जब मेरी शर्तें मान ली जाएगी।' (संजीव 2020:30)

राजा साहब कुँआरी के रूप से इतने ज्यादा मोहित थे कि उन्होंने यह शर्त मंजूर कर ली। कुँआरी ने और दो शर्तें रखी थी। कुँआरी ने राजा साहब से कहा था –

> …मुझे रानी की ही तरह प्यार और इज्जत से रखोगे।…राजकाज में कुछ करना चाहूँ तो रोकेंगे नहीं, कोई दखलंदाजी नहीं। (संजीव 2020:30)

कुँआरी ने राजकाज में हिस्सा लिया और अपने प्रयास से पूरे रियासत की काया ही पलट दी। कंठा नाला को चौड़ा कर और रास्ता काट कर नदी में बदल दिया। और इस नदी का उसी के नाम पर कुँआरी नाम रखा गया था। खेती होने लगी और फसल उगने लगे। चारों ओर खुशहाली छा गयी। कुँआरी द्वारा कंठा रियासत में खुशहाली लाने में निभाई गयी इसी भूमिका का बखान करते हुए खलील मियाँ कहते हैं –

> धीरे-धीरे रियासत की बागडोर अपने हाथों में लेती गयी। वे कदम वहीं रुके नहीं। इलाका तो उसका पहले से ही देखा-भाला था ही। तब कंठा का यह नार विजयगढ़ तक आकर ही रुक जाता था। आगे थोड़ी चढ़ान थी, तकरीबन सौ गज रही होगी और उसके आगे फिर ढलान। रानी ने दो साल में ही इस बीच की चढ़ाई को तुड़वा डाला और इस तरह रुके हुए नार को रास्ता मिल गया। जैसे वर्षों का रुका कारवाँ चल पड़ा। कंठा में पानी आ गया पानी बह निकला। नार से नदी बनने के लिए उन्हें उसे चौड़ा करवाना पड़ा। हमलोगों ने कभी सोचा भी न था कि रुका हुआ नार नदी भी बन सकता है, और कंठा की रुकी हुई नारी कुलदेवी ! चारों तरफ खुशी की लहर दौड़ गयी, खेती होने लगी, खुशहाली फैल गयी। (संजीव 2020:31)

बेड़िन स्त्रियाँ नगरवधुओं की तरह ही रह पाती थी। कुलवधुओं की तरह जी पाने का नसीब उनका नहीं होता था। उपन्यास में एक पात्र अछैबर सिंह बेड़िनों के इसी दु:ख की ओर संकेत करता हुआ कहता है –

> और यौवन गदरा जाता, कंठा की बेड़िनों का। जैसा कि आपको मालूम चार-चार रियासतों के बीच पड़ता है कंठा। जिस किसी के मन में आया मुँह उठाये चला आया। अब किसी ने पूछने की जुर्रत नहीं की कि बेड़िनों ! कभी तुम्हारा भी मन करता है घरातिन होने का? (संजीव 2020:33)

पर राजा साहब से ब्याह करके कुँआरी ने बेड़िनों की नियति ही बदल दी। कुँआरी की आँखें नीली थीं। लोगों का मानना था कि ऐसी नीली आँखों वाली बेड़िनों के पूर्वज जरूर अँग्रेजों की अवैध संतानें रही होंगी। राजा साहब से कुँआरी को एक बेटा हुआ जिसको लाल साहब कहते हैं। कुँआरी की शर्त के कारण ही लाल साहब को भी राजकुमार का दर्जा दिया गया और रियासत में भी उसका बराबर का अधिकार हुआ। कथावाचक मनोज इस संदर्भ में कहता है –

> रानी की शर्त भी यही थी कि...हमें और हमारी संतानों को राजकुल की सारी मान-मर्यादा और अधिकार प्राप्त होंगे। मनवा लिया। सौंदर्य के इसी अमोघ अस्त्र

> से उन्होंने यह आखिरी लड़ाई भी जीती। लाल साहब राय साहबों के तुल्य ही राजकुमार माने गये, एक जौ भी कम नहीं। (संजीव 2020:36)

कुँआरी को राजा साहब ने कुलदेवी बना दिया। कुँआरी अपने पुत्र और पुत्रवधु की अवमानना के कारण ही शायद अपने द्वारा खुदवाए बावड़ी में डूब कर आत्महत्या कर लेती है। उपन्यास के नायक मनोज का पहले भी यही अनुमान था। वह पाठकों से कहता है –

> और इस पर तुर्रा यह कि पूरी रियासत के लिए कुलदेवी हैं सिवाय अपने बेटे लाल साहब और उनकी रानी साहिबा के। कुलदेवी उनके प्रतापी खानदान पर एक बदनुमा दाग हैं। पुत्र के लिए माँ ही कलंक ! सारी लड़ाइयाँ जीत कर बेटे की लड़ाई हार कर ही कहीं आत्महत्या तो नहीं कर ली उस जीवट की महिला ने, क्या पता? (संजीव 2020:37)

कुँआरी का नगरवधुओं के रूप में जीने वाली बेड़िनओं के समूह का होना, कुँआरी के पूर्वजों का अँग्रेजों की अवैध संतान होने की संभावना जैसी कई बातों के कारण ही वे अपने पुत्र लाल साहब और पुत्रवधू की अवमानना का शिकार हुई। भविष्य में भी आने वाली पीढ़ियों द्वारा ऐसी अवमानना का शिकार होने की संभावना के कारण ही कुँआरी ने आत्महत्या की थी। लाल साहब ने बेड़िनों की बस्ती उजाड़ दी थी, कुँआरी से संबंधित हर व्यक्ति पर कहर ढाया था। मनोज कहता है –

> इस बदनुमा दाग को धोने के लिए एक-एक कर कुलदेवी से जुड़े सारे लोग पोंछ डाले गये। कहते हैं, इसी भुतहा ताल पर लाये जाते फिर वे अदृश्य हो जाते। आम धारणा तो यह है कि उनके हाथा-हाथी दौड़ कर मार डालते। (संजीव 2020:37)

लाल साहब अपनी माँ से बेहद नफरत करता था। लाल साहब की माँ कुँआरी की आँखें नीली थीं। यह नीली आँखें अंग्रेजी की देने थीं। अंग्रेजों की जोर जबरदस्ती का परिणाम थीं ये आँखें। कुँआरी की वंश की औरतों के साथ अतीत किसी समय अंग्रेजों ने अवैध संबंध बनाये थे। लाल साहब को अपनी नीली आँखों से इसलिए नफरत है। उपन्यास में एक पात्र कुशवाह मास्टर लाल साहब की अपनी नीली आँखों से बेतहासा नफरत का बयान निम्नलिखित शब्दों में करता है –

> कुलदेवी का मायका कंठा कैसे बचता? अरे लाल साहब तो उन्हीं के बेटे हैं, उनकी आँखें देखी हैं? कलंक के सारे चिह्नों को पोंछ दिया, मिटा दिया, कंठा गाँव को जला दिया लेकिन अपने चेहरे का क्या करते जिसमें नीली आँखें जड़ी हुई हैं। आईने के सामने खड़े होते हैं तो खुश होने की बजाय गंभीर हो जाते हैं। उनका

> वश चलता तो नाखून से खरोंच-खरोंच कर इस कलंक से भी मुक्ति पा लेते। दौरे पड़ते हैं तो खुरचने लगते हैं चेहरे को, पागलों की तरह। (संजीव 2020:35-36)

राज परिवार ही नहीं, रियासत का हर व्यक्ति कुँआरी को कुलदेवी की तरह पूजता था। पर एक लाल साहब और उनकी पत्नी इस बात को सहन नहीं कर पाते थे। बस्ती वाले मनोज और दुबे से कहते हैं –

> सचमुच की कोई देवी थी इस इलाके में तो वही थीं। गरीब आदमी का दर्द समझती थीं, बावड़ी जब तक रही पीने के पानी की कोई तकलीफ न हुई, दूर-दूर से लोग पानी ले जाते लेकिन जब से उसमें उनकी लाश मिली छूट गयी वह। (संजीव 2020:21)

अब रियासत उजड़ गया था। राय साहब और लाल साहब झूठी शान और दिखावे की जिंदगी जीते थे। दुबे मनोज से कहता है –

> यहाँ का सबसे बड़ा सिरदर्द है, इनकी झूठी शान का झगड़ा। (संजीव 2020:18)

पर इसके लिए भी अब उनके पास पैसा नहीं रह गया था। इसलिए राय साहब का मैनेजर दुबे अपने दोस्त मनोज सिंह को लाल साहब के मैनेजर के तौर पर ले आया था। रानी साहिबा की मनोज से कही गई निम्नलिखित बात से उनकी खस्ताहाल जिंदगी पर प्रकाश पड़ता है –

> पैसे का दें, ई पुराने ढंग के गहने हैं, अब इनका रिवाज नहीं है, बेच देना। (संजीव 2020:15)

राय साहब और लाल साहब में दुश्मनी थी और दोनों के बीच कई केस भी चल रहे थे –

> ऐसे कई मसले हैं, जिन पर लाल और राय का यानी नकली और असली वारिसों का मुकदमा चल रहा है। (संजीव 2020:12)

मनोज सिंह का काम था लाल साहब की आमदनी बढ़ाना। राय साहब और लाल साहब दोनों को विधान सभा का चुनाव लड़ना था। पर चूँकि वे मुँहमाँगी रकम बतौर रिश्वत या चंदा पार्टियों को देने की स्थिति में नहीं थे। अत: उन्हें किसी पार्टी से चुनाव टिकट नहीं मिलता था। पहले दिन परिचय के बाद ही लाल साहब विधायक बनने की अपनी ख्वाहिश जाहिर करते हुए मनोज से कहते हैं –

> हम चाहते हैं कि अगले चुनाव तक अपने इलाके का चुनाव जीत कर अपने पुष्पक विमान पर चढ़ कर हम राजधानी पहुँचें। पहुँचा सकेंगे? (संजीव 2020:12)

मनोज और दुबे पर इनके लिए पैसा जुटाने का भाड़ था। पश्चिम में पन्ना और पूरब में ओडिशा के 'भोग' तक फैली थी एक रत्न पट्टी। जहाँ जमीन के नीचे अलग-अलग प्रकार के रत्नों का अंबार रहने की बात फैल चुकी थी। और कंठा रियासत भी इसी पट्टी पर था। इसीलिए बहुत से लोग यहाँ की जमीन खरीद कर रत्न ढूँढ़ने में लगे थे। उपन्यासकार ने लिखा है –

> पश्चिम में पन्ना और पूरब में ओडिशा के 'भोग' तक फैली हुई है यह पट्टी। कितना सच है कितना मिथ – राम जाने, इसका तिलस्म यहाँ के रियासतदारों, मंत्रियों, ठेकेदारों को भरमाता रहा है। (संजीव 2020:7)

राय साहब और लाल साहब के लिए चुनाव लड़ने का पैसा जुटाने की एक बहुत कारगर तरकीब दुबे और मनोज ने निकाली। मनोज के शब्दों में –

> जगह-जगह भेदिया भेज कर हमने इस तथ्य को अच्छी तरह प्रचारित किया था कि रत्नों की पट्टिका का पट्टा लो – अगर किस्मत ने साथ दिया तो करोड़पति बन जाओगे। और यह मंत्र काफी कारगर सिद्ध हो रहा था – एक तरह की लॉटरी बेच रहे थे हम। (संजीव 2020:26)

राजा-रानी या जमींदारों का जागरूक होती जा रही अपनी प्रजा के प्रति कैसा रवैया था रानी साहिबा की निम्नलिखित उक्ति से समझा जा सकता है –

> इधर नमकहराम रैयत और उधर बेईमान पट्टीदार, सबकी गिद्ध जैसी नजर हमारे ऊपर। ये तो माता भवानी की किरपा है कि अभी तक आँख उठा कर देखने की हिम्मत किसी में नहीं है वरना…! (संजीव 2020:13)

जब छोटे राय साहब की मौत हुई और उनकी विवाहिता को सती बनाया गया। इस संदर्भ में मनोज की जिज्ञासा को शांत करता है दुबे। उनके वार्तालाप में आस्था के नाम पर विवेकहीन और अंधविश्वासी हो जाने वाले जनता की मानसिकता पर प्रकारांतर से व्यंग्यात्मक टिप्पणी की गई है –

> दुबे रुक-रुक कर बताने लगा, "मैं विजयगढ़ अभी आया ही आया था कि उसके कुछ वर्ष पहले हुई थीं सती, इस कुँआरी नदी के बगल। उन दिनों चारों तरफ सिर्फ उन्हीं के चर्चे थे। विश्वास है कि सीधे सरग गयी थीं सशरीर!"
>
> "जल कर या बिना जले?"
>
> दुबे ने खा जाने वाली नजरों से मुझे घूरा, "ऐसे सवाल नहीं करते, आस्था का सवाल है। पैंट खोल कर खदेड़ दिये जाओगे।" (संजीव 2020:22)

यह सब सुनने के बाद जैसा कि हर विवेकवान और इतिहास का जानकार व्यक्ति करेगा है, मनोज भी दुबे से प्रश्न करता है –

> इन दिनों यह कैसे संभव है यार? आखिर सरकार-वरकार, समाज-वमाज के रहते ऐसा कैसे हो सकता है? (संजीव 2020:22-23)

इसके जवाब में दुबे जो कहता है उससे सरकार और समाज के निकम्मेपन का पर्दाफाश हो जाता है –

> उसी सरकार-वरकार, समाज-वमाज से पूछो। (संजीव 2020:23)

तब वह मरी नहीं। आँधी-तूफान और बारिश में एक बड़ा पेड़ चिता पर गिरा था और सावित्री उछलकर पास की कुँआरी नदी में जा गिरी थी। नदी के पानी में बह रही सावित्री अनमोल नामक मल्लाह के जाल में जा फँसी थी। अनमोल और उसकी माँ ने सावित्री को स्वस्थ किया था। अनमोल सावित्री को माँ-बाप तथा अन्य रिश्तेदारों के पास भी ले गया था –

> गये न ! इनका देखते ही मिर्गी आय गयी जैसे उन्हें, 'हटाओ इसे, हटाओ हटाओ।'
>
> 'ठाकुर साहब आपकी बिटिया।'
>
> 'हमारी बिटिया तो सती होइ गयी।' जैसे किसी भारी मुसीबत में पड़ गये थे वे। आश्चर्य, कोई इतना बेदर्द हो सकता है। (संजीव 2020:60)

पर सब ने अपनी बेटी को रखने से इनकार कर दिया था। अनमोल सावित्री को लेकर कुछ सालों तक कंठा से दूर रहा। सती करते वक्त सावित्री गर्भवती थी। पर उसके कहने पर भी राज परिवार के किसी ने उस पर विश्वास नहीं किया। उनको यही लगा कि सावित्री जान बचाने के लिए बहाना बना रही है –

> 'ऐसा सौभाग्य सबको कहाँ मिलता है !' सावित्री समझ नहीं पा रही थी कि उसके साथ क्या हो रहा है। किसी अनहोनी की आशंका में उठ कर वह भागी ही थी कि सबने उसे पकड़ लिया, वह चीखी, 'मेरे पेट में छोटे कुँवर का बीज है।'
>
> 'जान बचाने को बहाना गढ़ रही है !'
>
> उसे पकड़ कर कुछ पिलाया गया। कुछ मुँह में गया कुछ कपड़ों पर। ढोल-नगाड़े, घरी-घंट, तुरही पता नहीं कैसी-कैसी आवाजें ! मनहूसियत और आतंक से भरा

> दिन। गड़गड़ाते बादल और उन्मत्त धर्मार्थी भीड़। उसे पता नहीं चल रहा था कि उसे हाँक कर कहाँ ले जा रहे थे लोग। (संजीव 2020:56-57)

सती करने की घटना के कुछ महीनों बाद सावित्री ने छोटे राय साहब के अंश को जन्म दिया।

अंधविश्वासी लोगों को किसी का सती बना दिया जाना बहुत गर्व की बात लगती है। पर जिसको मृत पति के साथ चिता पर जिंदा जलने के लिए बैठा दिया जाता है वही जानती है जलना क्या होता है। बिना किसी दोष के परंपरा के नाम पर बलि चढ़ जाना क्या होता है। अपने सपनों-ख्वाहिशों को कभी पूरा न कर पाने का गम क्या होता है। पर अंधविश्वासी लोग सती होते हुए किसी को देखते हैं तो अपने आपको सौभाग्यशाली मानते हैं और ऐसे अवसर चूक जाते हैं तो इसे अपना दुर्भाग्य मानते हैं। लाल साहब की पत्नी रानी साहिबा सावित्री का सती होना देख ना पाने के कारण दु:ख व्यक्त करती है और लोगों से सुनी बातों को इस लहजे में पेश करती है कि मानो सती होना संसार का सबसे बड़ा पुण्य है –

> दूसरों के मुँह से सुना, ओह, उस दिन क्या परताप था उनका ! सोरहों सिंगार किये हँसते-खेलते आयी थीं। झाँझ-मजीरे, ढोल-नगाड़े, तुरही बज रही थी। आगे-आगे घरी-घंट उसके पीछे छोटके राय साहब की अर्थी और उसके पीछे वे ! लोग फूल बरसा रहे थे। पति गोद में लेकर चंनन की चिता पर बैठीं तो क्या आभा थी चेहरे पर। आग छुआते ही लपक उठी और धरती डोलि गयी। आकाश-पाताल एक हो गया। परलय आ गया परलय ! सोने के सिंहासन पर सीधे सरग ! बगल के पीपर महाराज ने सबसे पहले गोड़ धरा सती का। आज तक मूड़ी नहीं उठाये जाके देखि आओ। (संजीव 2020:41)

जिस दिन सावित्री को सती किया गया था, उस दिन आँधी-तूफान और बारिश के कारण सभी लोग भाग कर चिता से दूर सुरक्षित स्थानों पर चले गये थे। अत: चिता पर पेड़ के गिरने के कारण जलती सावित्री को ऊपर उछलते हुए तो कुछ लोगों ने देखा था। पर उसके नदी में गिरकर बह जाने की संभावना पर किसी ने ग़ौर नहीं किया था। जिन्होंने सावित्री को उछलते देखा था उन सभी को लगा सावित्री सशरीर स्वर्ग चली गयी है। अनमोल और उसकी माँ ने आधी जल गई सावित्री को छुपाकर ही रखा। क्योंकि उसके जीवित बचने की बात पता चलते ही राज परिवार उसे फिर से सती कर देता। अनमोल से सावित्री को एक बेटा होता है। दो-तीन साल बाद अनमोल की माँ के बुलावे पर वे रियासत में फिर आ जाते हैं।

मनोज को रियासत में आकर कुलदेवी और सती मैया के प्रति तीव्र जिज्ञासा हुई थी। इस उपन्यास की पूरी कथा उसके जिज्ञासा के क्रम में ही खुलती जाती है। एक दिन अनमोल से मनोज का परिचय होता है

और अनमोल की मार्फत सती बना दी गयी सावित्री से भी। सावित्री अपने जीवन की विडंबना को व्यक्त करती हुई कहती है –

> कभी-कभी तो हम खुद ही भूल जाते हैं कि वह कौन था जो मर गया, और वह कौन है जो जिंदा है ! अगर मैं जिंदा हूँ तो वह कौन थी जो मर गयी और अगर मैं मर गयी तो वह कौन है जो जिंदा है। (संजीव 2020:102)

सावित्री से बचनबद्ध होने के कारण सावित्री के जीवित रहने की बात वह किसी को नहीं बताता। लाल साहब का मुंबई में रहने वाली डॉली नामक एक युवती से संबंध बन जाता है और वे उसे ब्याह लाते हैं। इससे लाल साहब की पत्नी रानी साहिबा कोहराम मचा देती है। पर जब डॉली को इस बात का पता चलता है कि जब लाल साहब की मृत्यु होगी तब उसे भी सती किया जायेगा, वह रियासत छोड़कर एक प्रकार से भाग ही जाती है।

दुबे और मनोज ने राय साहब और लाल साहब के लिए पैसे जुटाने हेतु बहुत सी बंजर भूमि बेची। इनमें से एक जमीन में मिट्टी के नीचे से खोदते वक्त नये मालिक जगत प्रजापति को एक बेशकीमती हीरा मिला। इस हीरे को पाने के लिए जगत प्रजापति पर अमानुषिक अत्याचार किया गया, जिससे वह अपनी याददाश्त खो बैठा। मनोज जगत को बेरहमी से पीटता हुआ देखकर लाल साहब और राय साहब से कहता है –

> सर उसकी याददाश्त खो गयी है। अब टॉर्चर किया गया तो यह मर जाएगा और आपके लिए भारी मुसीबत खड़ी हो जाएगी। (संजीव 2020:84)

हीरे पर कब्जा न कर पाने के कारण राय साहब और लाल साहब ने इस सबका जिम्मेदार दुबे और मनोज को ही ठहराया। मनोज और दुबे को धमकाया गया। लाल साहब और राय साहब पर रत्नों के लालच का नशा तारी हो चुका था। मनोज इस स्थिति का व्यक्त करता हुआ कहता है –

> जब दो विपरीत आवेशों वाले बादल टकराते हैं तो चिर्री पड़ती है। अजय और विजयगढ़ में यही हुआ था और गाज गिरी थी हम दोनों पर। हमें बुला कर धमकाया गया। पूरे कंठा में पिछले दस साल में जब-जब जिस-जिस को जमीन लीज पर दी गयी या उत्खनन किया गया, उनके नाम-पते, बैंक और इन्वेस्टमेंट के डिटेल्स हाजिर करें ताकि पता चले कि रत्नों की लूट कैसे हुई। किस किसने कितना-कितना लूटा। वरना हमारी खैर नहीं। (संजीव 2020:89)

दुबे एक महीना दस दिन रियासत से बाहर रहा और जब आया तो एक प्रस्ताव के साथ कि सशरीर स्वर्ग जाने वाली सती मैया के लिए एक भव्य मंदिर का निर्माण किया जाए। इससे करोड़ो करोड़ रुपयों की आमदनी होगी। इस मंदिर में लगने वाली ईंट भारतीय इतिहास में समय-समय पर होने वाली अलग-अलग सतियों के नाम पर बनायी जाए। इस योजनानुसार मंदिर निर्माण का आयोजन होने लगता है। सैकड़ों पंडित, धर्माचार्य रियासत में जुटने लगते हैं, देश-विदेश से मंदिर निर्माण के लिए दान-दक्षिणा होने लगती है। इस क्रम में उपन्यासकार ने सती दाह प्रथा पर विचारोत्तेजक टीका-टिप्पणियाँ की हैं। राजा राममोहन राय ने सती दाह प्रथा को बंद कराने में अहम भूमिका निभायी थी। इसके पीछे का एक कारण यह भी था कि उनकी भाभी को भी सती बनाया गया था। राजा राममोहन राय अपनी भाभी को बहुत मानते थे। राजा राममोहन राय की भाभी अलोक मंजरी को दूसरे दिन अधजली अवस्था में जिंदा पाकर फिर से जलाया गया था। उपन्यास में इस प्रसंग का उल्लेख निम्नलिखित प्रकार से किया गया है –

> बारिश हो रही थी, रात को लोग जला कर लौट आए थे लेकिन सुबह लोगों ने पाया कि वहीं झाड़ियों में अधजली अवस्था में कोई नंगी औरत छुपने की कोशिश कर रही है, वहीं थीं, तब गाँव वालों ने उन्हें दुबारा जलाया। (संजीव 2020:123-124)

राजा राममोहन राय की भाभी अलोक मंजरी को सती बनाये जाने के तथ्य की जाँच-परताल के लिए मोहन बंगाल जाता है और वहाँ वह कल्पना करता है दूसरे दिन अलोक मंजरी को अधजली अवस्था में जीवित देखकर लोगों ने क्या प्रतिक्रिया दी होगी। मनोज तत्कालीन अंधविश्वासी लोगों की मानिसकता के आधार पर जैसी कल्पना करता है, उससे पाठक अंधविश्वासी लोगों की क्रूरता और कठोरता को महसूस कर थर्रा जाते हैं–

> लोग चीखने लगे होंगे, जो करना है जल्दी करो। इसका बच जाना और जल कर बच जाना मरने से भी ज्यादा खतरनाक है। जलाओ, इसे फिर से जलाओ। सती दहन की क्रिया को अधूरा नहीं छोड़ा जा सकता। इस तरह सतीदाह की प्रक्रिया दुबारा संपन्न हुई होगी। (संजीव 2020:126)

पर अंधविश्वासी लोग इस तरह किसी का जलाया जाना गर्व की बात मानते हैं और ऐसी प्रथा को गौरवशाली। उनकी ऐसी सोच चरम अमानवीयता और नीचता से भरी है। उपन्यास का ऐसा ही एक नीच अंधविश्वासी पात्र अउधू सती दाह प्रथा का अंग्रेजों द्वारा बंद करा दिए जाने पर खेद प्रकट करता हुआ कहता है –

> ऐसी गौरवमयी परंपरा को अंग्रेजों ने बंद करा दी। मैं न हुआ, लॉर्ड विलियम बेंटिक और राममोहन को गोली से उड़ा देता। (संजीव 2020:126)

सती दाह प्रथा की क्रूरता का बयान तत्कालीन लेखक भी कर गये हैं। मोहन इस संदर्भ में लेखक जे पेग्स का हवाला देते हुए एक सभा में भाषण में कहता है –

> तत्कालीन लेखक जे पेग्स के अनुसार – कहीं भाग न जाएँ, सो औरत को मृत पति के साथ बाँध दिया जाता था, फिर भी कुछ भाग जातीं अत: बाँसों से दबा कर जलती स्त्री को तब तक रखा जाता, जब तक जल न जाए। (संजीव 2020:129)

ऐसा नहीं है कि इस प्रथा के पक्षधर सिर्फ पुरुष ही थे। स्त्रियाँ भी थीं। उपन्यास में इक्किसवीं सदी में भी सती होने की घटनाओं का चित्रण हुआ है। ऐसी ही एक सती दाह की घटना को घटित होता हुआ उपन्यास दिखाया गया है। सती होती हुई औरत को देखने के लिए लोगों की भीड़ लग जाती है। औरत खुद सती होने को उतावली होती है। पर कुछ जागरूक व्यक्ति उस औरत को ऐसा करने से रोकने के लिए एक कमरे में बंद कर देते हैं। इस पर तमाशबीन औरतें अफसोस करते हुए कहती हैं –

> "ये घोर अनियाव है, घोर अनियाव !" दूसरी आवाज, "कोई मजा नहीं आया। आना अकारथ गया।"
> "अंदर से बेचारी रोती-पीटती रही।"
> "हे अम्मा !" एक अन्य औरत ने कहा, "हम तो कहत हैं, सत ही नहीं था उसमें नहीं तो एक क्या सात फाटक के अंदर कैद होती तो भी फाटक तोड़ कर आग में कूद कर अपने पति के साथ हो लेती।" (संजीव 2020:163)

अलग-अलग समय में हुए सतियों के दाह की घटनाओं का अभिनय कंठा रियासत में मंच पर होने लगता है। अंत में अलोक मंजरी के दाह का अभिनय होने के दौरान सावित्री अपने दोनों बच्चों के साथ मंच पर आती है और रियासत के असंख्य लोगों के सामने अपना भेद खोलती है और कहती है –

> आप चाहें तो इस अलोक मंजरी को फिर से मार कर जला दें। मेरे इस दाह में आप सभी स्त्री-पुरुष, माता-पिता शामिल रहे, सारे पुण्यार्थों, धर्म, परंपराओं, समाज – मैं आपके कठघरे में खड़ी हूँ। विचार कीजिए। (संजीव 2020:176)

यह कहकर सावित्री और प्रकारांतर से उपन्यासकार पूरे मानव समाज को सती दाह प्रथा की अमानवीयता पर विचार-विमर्श करने की चुनौती देते हैं।

किसी भी घातक परंपरा का पालन औरत को ही करना पड़ता है। औरत ही ऐसी परंपराओं की शिकार होती है। इन परंपराओं से औरतों पर होने वाली क्रूरता पर चोट करना और लोगों को जागरूक करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य प्रतीत होता है। उपन्यास के एक पात्र खरे साहब के एक सभा में दिए गए भाषण के इस अंश में उपन्यासकार उद्देश्य साफ झलकता है –

> ईश्वर या प्रकृति के सिरजी सृष्टि में कोई किसी का गुलाम नहीं है, फिर यह डायन, यह मॉब लिंचिंग, यह ऑनरकिलिंग जैसे बर्बर हुड़दंग क्यों, जिसका शिकार औरत ही तो होती है, आप उस पर ही सती का मूल्य कैसे लाद सकते हैं जो आप खुद नहीं कर सकते। आग...! मैं हाथ जोड़ कर अरज करता हूँ, आग से मत खेलिए, आग में औरतों को मत झोंकिए। (संजीव 2020:173)

निष्कर्ष :

किसी परंपरा के पालन के लिए किसी के मानवीय अधिकारों का हनन कभी भी उचित और न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता। जीवित रहने का सभी को अधिकार होता है। हम किसी को प्राण दे नहीं सकते, अत: किसी को बिना किसी अपराध के जीवित रहने से वंचित कर देना का अधिकार किसी को नहीं है। 'मुझे पहचानो' उपन्यास भी इसी सत्य पर जोर देता है। यह उपन्यास मनुष्य की चरम अमानवीयता का दृष्टांत प्रस्तुत करता है। एक गर्भवती महिला को सती बनाने की घटना क्रूरता की हद है। इंसान को इस हद तक संवेदनाशून्य और अमानवीय नहीं होना चाहिए। इस प्रथा को गौरव की तरह ग्रहण करना चरम नीचता है। उपन्यासकार इस बात को गहराई से महसूस करते हैं और इस उपन्यास के द्वारा संवेदना और विचार के धरातल पर ऐसी अमानवीयता का विरोध भी करते हैं। उनका यह प्रयास प्रशंसनीय है।

ग्रंथसूची :

संजीव. मुझे पहचानो. प्रथम संस्करण . दिल्ली: सेतु प्रकाशन, 2020.

****

संपर्क सूत्र :

डॉ. संजीव मंडल
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, नगाँव कॉलेज (ऑटोनोमस)
चलभाष : 8135054304
ई-मेल : 666mandal@gmail.com

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 61-75

अनवर सुहैल कृत 'उम्मीद बाक़ी है अभी' में अभिव्यक्त उत्तर-आधुनिक विमर्श

अरशदा रिज़वी
प्रो० नवीन चन्द्र लोहनी

शोध-सार :

भूमंडलीकरण और उत्तर-आधुनिक विचारधारा के परिणामस्वरूप वर्तमान समय में मनुष्य का बोध बदल रहा है। उत्तर-आधुनिक विचारधारा आधुनिक युग में हुए विकास से उत्पन्न सकारात्मक और नकारात्मक सभी परिणामों को देखने की नई दृष्टि प्रदान करती है। सदियों से वंचना का शिकार रहे समूहों के अस्तित्व के लिए आवाज़ उठाती है तथा उनको केन्द्रीय स्थिति में आने के लिए अवसर प्रदान करती है। इन्हीं उत्तर-आधुनिक विशेषताओं का सम्मिश्रण अनवर सुहैल की कविताओं का केंद्रीय विचार है। समाज की वर्चस्ववादी धारा के ख़िलाफ़ एक ओर तो उनकी कविताएँ अपनी आवाज़ बुलंद करती हैं, वहीं दूसरी ओर हाशिए पर छोड़े गए समाज की अब तक मौन पड़ी वाणी को स्वर प्रदान करती हैं। भारत में जाति, धर्म, लिंग, वर्ण के आधार पर हाशिए के समाज का निर्माण किया गया, जिसके माध्यम से स्त्री, दलित, किन्नर, अल्पसंख्यक, आदिवासी और किसान-मज़दूरों को मुख्यधारा से बाहर कर दिया गया। उनकी आवाज़ को दबाया गया किन्तु अब यह दबी आवाज़ उठकर विमर्श के केंद्र में आई और अपने हक़ की जद्दोजहद शुरू की। अनवर सुहैल के काव्य ने इन सभी तमाच्छन विमर्शों को रोशनी दिखाई है। इस उत्तर आधुनिक युग में इन विमर्शों के अतिरिक्त ये अस्तित्वहीन अन्य विचारों को केन्द्र में लाते हैं जिनमें वृद्ध विमर्श, कविता विमर्श, बदलती संस्कृति तथा डिजिटल समय में अस्तित्व खोती पुस्तकें इनके विमर्श के केन्द्र में हैं।

बीज-शब्द : *उत्तर-आधुनिकता, नव्यसंस्कृतिवाद, विखंडनवाद, पर्यावरण विमर्श, वृद्ध विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श, अल्पसंख्यक और मुस्लिम विमर्श*

प्रस्तावना :

औद्योगिक तकनीकी और सूचना संप्रेषण प्रणाली के विकास ने विश्व में नवीन क्रांति ला दी है। विश्व के अलग-अलग कोनों में घटित होनेवाली घटनाओं एवं समाचारों से विश्व के किसी भी कोने में बैठा व्यक्ति क्षणभर में लाभ पा सकता है। सूचना संप्रेषण प्रणाली का वृहद जाल दुनिया के हर एक इंसान के लिए लाभकारी एवं सुविधाजनक सिद्ध हुआ है। अलग-अलग देशों के विचारों एवं विमर्शों से कोई भी परिचित होकर अपनी भावनाओं तथा अपने विचारों को भी इससे जोड़ सकता है। इस प्रणाली ने युगों से दमित एवं

शोषित वर्ग को भी अपनी दशा से विश्व को अवगत कराने का अवसर प्रदान किया। यह सब तकनीकी क्रान्ति और उत्तर आधुनिक विचारधारा का परिणाम है जो पश्चिमी देशों में 1960-70 के दशक से शुरू होकर भारत में 1990 के दौर तक विकसित हुई।

विश्लेषण :

उत्तर-आधुनिकतावादी विचारक पुरातन परम्पराओं, विचारधाराओं, धर्म, इतिहास, लेखक तथा कविता का अंत होने की घोषणा करते हैं। साथ ही

> उत्तरआधुनिकतावादी सांस्कृतिक बहुलवाद का पक्षधर दर्शन सत्ता का विकेंद्रीकरण, मानवाधिकार, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, पर्यावरण सुरक्षा, नारी मुक्ति तथा निजी एवं सामाजिक दोनों स्तरों पर स्वातंत्र्य भावना का प्रबल समर्थन होने के अपने तमाम दावे के बावजूद एक विखंडित उपभोक्तावादी समाज और आवारा भूमंडलीय पूँजीवाद की सेवा करता है और उसके हितों का बराबर ध्यान रखता है। (श्रीवास्तव 2006:12)

भूमंडलीकरण और उत्तर आधुनिकता का यह दौर जहाँ बाज़ारवादी नीतियों के पोषक के रूप में उभरा है वहीं दूसरी ओर हाशिए पर धकेल दिए गए समूहों को केन्द्र में लाने का प्रयास करता है। इस प्रयास को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से उत्तर-आधुनिक साहित्य ने अपने स्तर पर प्रस्तुत कर लोगों तक पहुँचाने की कोशिश की। इस स्थिति पर विचार करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं –

> उत्तर आधुनिकतावाद एक ऐसा ग्लोबल खेल है जिसमें हम सब शरीक हैं। यह हमारी ही भूमंडलीय अवस्था की रामायण है। इस नवीन भूमंडलीय रामायण में हम सबका बोध बदल रहा है और हमारे सभी सांस्कृतिक-ज्ञानात्मक प्रतीक बाज़ारवाद में बिकने को तैयार हैं। (पालीवाल, 2008:5)

यह विचारधारा आधुनिकता के बाद उभरी वैश्विक परिस्थितियों में हुए परिवर्तनों को सम्मुख रखती है। विभिन्न स्तरों पर हुए बोधात्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक बदलावों ने किस प्रकार वैचारिक भावशून्यता की मंद पड़ी लौ को निर्भय समाज के सम्मुख दृढ़ हो जाने का साहस प्रदान किया। इस जागरण के परिणामस्वरूप उत्तर-आधुनिक साहित्य ने अपनी विभिन्न विधाओं के माध्यम से दबायी गई आवाज़ों तथा वर्चस्ववादी सत्ताओं द्वारा कुचले गए समूहों को तीक्ष्ण स्वर प्रदान किया है, जिस कारण बहुत सी आवाज़ें समकालीन विमर्शों का हिस्सा बन गई हैं।

इन्हीं उत्तर-आधुनिक समकालीन विमर्शों का अनवर सुहैल (1964) की कविताओं में संगम दृष्टिगोचर होता है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी अनवर सुहैल ने हिंदी की विभिन्न विधाओं जैसे कहानी, उपन्यास, कविता आदि विधाओं में अपनी कलम की तीक्ष्ण नोक से समाज के विभिन्न सत्यों को बींधते हुए वर्तमान परिस्थितियों से अवगत कराने का हर संभव प्रयास किया है। इनका काव्य संग्रह 'उम्मीद बाक़ी है अभी' जो 2023 में प्रकाशित हुआ है, इसमें वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक स्थितियों के साथ-साथ उत्तर-आधुनिक विमर्शों को भी समाहित कर बख़ूबी चित्रित किया गया है। इस संग्रह में अलग-अलग उभरते चित्रों के माध्यम से इन्होंने समकालीन परिदृश्य के सभी पक्षों को उजागर करने का प्रयास किया है। इस काव्य संग्रह में 90 कविताएँ हैं, जिनमें इन्होंने बहुत-सी भावनाओं के चित्रों को खींचा। अनेक फुसफुसाहटों और गर्जनाओं को आधार बनाकर अपनी कविताओं में उल्लिखित किया है। पिछले कुछ सालों में घटित अनेक समसामयिक समस्याएँ इस काव्य संग्रह की माला में गुंथी हुई हैं। वर्तमान भारतीय समाज की प्रत्येक संवेदनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति की है। इन्होंने अपनी कविताओं में समसामयिक समस्याओं के साथ-साथ अनेक अस्मितामूलक विमर्श को भी परिधि के केंद्र में लाने का प्रयास किया है।

नव्य संस्कृतिवाद या बहुलतावाद उत्तर आधुनिकता की एक प्रमुख विशेषता है, जिसके माध्यम से यह अभिजात्यवादी वर्चस्व की सर्वसत्तावादी नीति को चुनौती देकर बहुलतावाद को केन्द्र में लाती है। रचनात्मकता पर यांत्रिक एकाधिकार को समाप्त कर प्रचलित पूर्वधारणाओं का खण्डन कर नव्य सांस्कृतिक परिदृश्यों के मार्ग खोलती है। तकनीकी ज्ञान के सतत विकास ने इसे उत्तरोत्तर समृद्ध किया जिससे 'ग्लोबल पावर' का सिद्धांत प्रबल हुआ। उत्तर आधुनिकता

> अपने समय की क्रांतिकारी प्रवृत्ति और एक ऐसा सैद्धांतिक वाद-विवाद, कला-साहित्य संवाद, विश्वभर के वर्तमान का वृत्तांत, सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनवाद का नव दर्शन, बहुलतावाद, केंद्रवाद को तोड़कर परिधि की ओर बढ़ता, अपनी जड़ों की ओर लौटता एक अनंत खुला विचार क्षेत्र, जिसमें सभी पुरानी विचारधाराओं, वादों प्रवृत्तियों, संस्थानों का अंतवाद घोषित है। एक प्रकार से यह आधुनिकतावाद का नया विस्तार है उसकी सीमाओं को तोड़ता 'पॉवर शिफ्ट' का नया विज्ञान और भूगोल। (पालीवाल 2008:1)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उत्तर आधुनिकता वैश्विक स्तर पर विस्तीर्ण उन्मुक्त वैचारिक श्रृंखला है जिसने पुरानी वैचारिक धारणाओं पर अनेक प्रश्नचिह्न खड़े किये हैं तथा उन वैचारिक धारणाओं में अंतर्निहित अभावों का केन्द्रीकरण करने का प्रयास किया है।

'उम्मीद बाक़ी है अभी' काव्य संग्रह की कविताएँ इस युग की तल्ख़ी और भावनाओं में नैराश्य से उत्पन्न हुई तिलमिलाहट से सत्य को उजागर करने से डरती हैं, परन्तु फिर भी एक उम्मीद छोड़ जाती हैं कि पाठक इन पंक्तियों में छिपे अर्थ को ग्रहण कर लेगा। इस काव्य संग्रह की दूसरी कविता 'उम्मीद बाक़ी है अभी' समय के सच को देखने की उम्मीद ख़ुद पाठक पर ही छोड़ती है। उत्तर-आधुनिक कविता में पाठक के आधार पर अर्थ-संदर्भ तय होते हैं। इसलिए ये भी पाठक पर ही इनकी कविताओं में छिपे सत्य को आभासित करने के लिए छोड़ देते हैं और कहते हैं कि-

कोई और जुग होता तो हो सकता है कि

इतनी खुरदुरी इतनी तल्खी और

इतनी तिलमिलाहट न होती इन कविताओं में। …

मेरी इन कविताओं में/ समय का सच

सीधे मुखर होकर नहीं आ पा रहा है

और पंक्तियों के बीच/ छुपा हुआ है सच

मुझे उम्मीद है/ उसे तुम बांच लोगे दोस्त! (सुहैल 2023:6)

उत्तर-आधुनिक विचारधारा के समानांतर जॉक देरिदा ने 'विखंडनवाद के सिद्धांत' का प्रतिपादन किया। इसी सिद्धांत के सम्बध में कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं –

> उसने अपने बलबूते पर एक 'व्याख्याकार का मठ खड़ा कर दिया। उसने साहित्य चिंतन की कन्वेंशनल पद्धति में मौजूद 'रूप' और 'प्रकृति' की अवधारणा को पूरी तरह बदल डाला।.....इस अर्थ में उत्तर-संरचनावाद और उत्तर-आधुनिकतावाद नए विश्व का नया बौद्धिक सांस्कृतिक आर्थिक पर्यावरण है, दार्शनिकता है, नई पद्धति है, नया भूमंडलीय यथार्थ जिसका 'पाठ' 'टेक्स्ट' एक बिल्कुल नई अवधारणा की तरह समझा जाना चाहिए। (पालीवाल 2008:19)

इस सिद्धांत ने साहित्य-रीति के पुरातन प्रतिमानों को बदलकर नई रीति का चलन आरंभ किया जिसके केन्द्र में पाठक तथा पाठक की मानसिक भावनाओं एवं क्षमताओं को स्थान मिला। इन्होंने माना कि 'रचना या कविता का अंत' हो गया है क्योंकि रचना का अर्थ पाठक की मानसिक भावभूमि के अनुसार तय होगा। इसमें रचनाकर्ता के नहीं अपितु पाठक के विचारों का महत्व होगा। इस सिद्धांत ने साहित्यकार की

दृश्य-अदृश्य केंद्रीय व्यवस्था की समाप्ति कर पाठक की सत्ता स्थापित की। 'सहमा-सिकुड़ा सच' नामक कविता में अनवर सुहैल अपनी कविताओं को किसी भी तरह के सौन्दर्य शास्त्र के मापदण्ड पर नापने से मना करते हुए कहते हैं कि

आलोचकों काहे तलाशते हो

किसी भी तरह का सौन्दर्य शास्त्र मेरी कविताओं में

मेरी कवितायें बाहर है उन सीमाओं से

यह समय सौंदर्य शास्त्र के मापदण्ड नापने का नहीं दोस्तो

भोथरे होते जा रहे हैं पूर्व और प्राच्य के चिंतन

रस-छंद-अलंकारों की बंदिश में मत बाँचो

कुछ दिन और इन कविताओं को

ये कविताएं जुनून में तारी हो रही हैं

देखते नहीं कि तमाम तार्किकताओं को किस तरह किया जा रहा है ध्वस्त

अतार्किकता इस समय का मूल भाव है। (सुहैल 2023:100)

उत्तर आधुनिकता आधुनिकतावादी तार्किकता का विरोध करती है तथा विविध मानवीय अनुभव और दृष्टिकोणों की बहुलता पर ज़ोर देती है।

उत्तर-आधुनिक युग सांस्थानिक शैथिल्य का युग है। परम्परागत संस्थान अस्तित्वहीन होते जा रहे हैं। उत्तर आधुनिक मनुष्य परंपरागत संस्थाओं जैसे- परिवार, धर्म, समाज और विवाह आदि के बंधन से स्वच्छंद होकर अपनी स्वायत्तता चाहता है। औद्योगिक क्रान्ति के कारण गाँवों को छोड़ लोगों का शहरों की ओर उन्मुखीकरण हुआ। शहरीकरण के परिणामस्वरूप पुरातन पारिवारिक संस्थाओं में शैथिल्य उत्पन्न हो गया तथा संयुक्त परिवारों का विघटन हो गया। उत्तरआधुनिक युग का बाज़ारवादी ढाँचा हर एक वस्तु को उत्पाद की नज़र से देखता है, यहाँ तक कि मनुष्य भी उसके लिए एक उत्पादन मात्र है। आज पूँजी का स्थान सब रिश्ते-नाते से बढ़कर है। आज –

संवेदनाएँ खोखली हुई जा रही हैं

स्मृतियों के दृश्य धुंधलाते जा रहे

बाजार ने जब्त कर ली रिश्तों की मिठास

अंतहीन व्यस्तताएँ खोजती रहती हैं

गम में शरीक न हो पाने के बहाने (सुहैल 2023:84)

और इसी बनावटी तथा व्यस्त समाज की चपेट में वृद्धावस्था भी आ रही है; क्योंकि वृद्धावस्था में मनुष्य पूँजी अर्जित करने में सक्षम नहीं बचता उसकी शारीरिक कार्यक्षमताएँ समाप्त हो जाती है। ऐसी स्थिति में समकालीन समाज में वृद्धों के प्रति उनके परिवारजनों का नज़रिया बदल जाता है। उसी स्थिति पर विचार करते हुए अनवर सुहैल लिखते हैं -

है कठिन समय ऐसा यह

जब बुढ़ापे की लाठी

नहीं बनना चाहता कोई

भूमण्डलीय बाज़ार की ताकतें

लगी हैं तोड़ने

लाठी का सहारा

बच्चे अब बुजुर्गों को

नहीं रखते साथ

बच्चों के पास नहीं है वक्त

खुद अपनी खातिर बढ़ती

इस आपाधापी के दौर में

फिर भला कैसे उनके पास

बचे समय बूढ़ों के लिए

खामखां माथा चटवाने के लिए। (सुहैल 2023:16)

आधुनिकीकरण और व्यक्तिवादी सोच ने रिश्ते-नाते, संस्कार तथा सामाजिक संरचनाओं में शैथिल्य उत्पन्न कर दिया है। भूमण्डलीय बाज़ारवादी नीतियाँ तथा अत्यधिक पूँजी की आपूर्ति हेतु मनुष्य मशीन बन गया है। उसके पास उन माता-पिता के लिए भी समय शेष नहीं है जिन्होंने उसे पैदा किया तथा उसे इस प्रतिस्पर्धावादी व्यवस्था का सामना करने के क़ाबिल बनाया। यहाँ तक कि वे यह भी जानते है उन पर भी यह दौर आना है, मगर फिर भी वे अपनी सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारियों से मुँह मोड़ लेना चाहते हैं। इस पर अनवर सुहैल लिखते हैं –

ऐसा नहीं है कि

बच्चे नहीं जानते अपनी सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारियां

लेकिन बाजार उन्हें

बना देता ढीठ इतना

कि वे हटा देते दैनिक जरूरतों से

अपने बुज़ुर्गों की उपस्थिति

गैर ज़िम्मेदार बच्चे

ये भी जानते हैं

कि उनके बड़े होते बच्चों के

आंख के मेगापिक्सल कैमरे खींच रहे फोटो

सहेजी जा रही तस्वीरें

दिमाग के हार्ड डिक्स में। (सुहैल 2023:16)

आज के दिखावे के दौर में भारतीय वृद्ध हाशिए पर कर दिए गए हैं। कथित आधुनिकता की दौड़ में परंपराओं को दकियानूसी मानकर बच्चे अपने ही माता-पिता को घर से बाहर कर देते हैं। ऐसे में वृद्धों को वृद्धस्थली की शरण लेनी पड़ती है क्योंकि

बुढ़ापा सहारा खोजता है और सहारे आज़ादी छीन लेते हैं

अब्बा बेटे-बेटियों के घर पारा-पारी दिन गुजारने को अभिशप्त हो गये

और नगर के हृदय में बसा उनका मकान

तिलचट्टों का बन गया अड्डा। (सुहैल 2023:71)

नयी पीढ़ी पर पाश्चात्य दिखावे की ऐसी पट्टी बंधी हुई है जिसने उसे ही पथभ्रष्ट कर दिया है। मानवीय मूल्यों को व्यक्तिवादिता तथा भौतिक सुख सुविधाओं के लबादे ने ढक दिया है। बच्चे बुजर्गो की देखभाल नहीं करना चाहते, उनकी बात नहीं सुनना चाहते उनसे दूर भाग जाना या उन्हें दूर भगा देना चाहते हैं। ऐसी उपेक्षाओं को सहकर कुछ वृद्ध अलग-अलग कार्यों में लगकर अपने जीवनयापन का मार्ग खोज लेते हैं। इस स्थिति के विषय में अनवर सुहैल लिखते हैं-

मैंने देखा एक बुजुर्ग को पौधे को सींचते

मैंने देखा एक बुजुर्ग को चप्पल सिलाई करते

मैंने देखा एक बुजुर्ग को अखबार बांचते मुझे लगा इन खुद्दार बुजुर्गों ने जैसे

जीत लिया हो काल (सुहैल 2023:17)

उत्तर आधुनिकता समसामयिक समाज विशेष तौर पर पूंजीवादी साम्राज्य के प्रति तीक्ष्ण घृणा से उत्पन्न प्रतिक्रिया का परिणाम है। पश्चिम की साम्राज्यवादी नीति के प्रसार से अंधाधुंध औद्योगिक क्रांति हुई जिसने पराजित देशों के प्राकृतिक संसाधनों को अपनी महत्वाकांक्षाओं की आपूर्ति हेतु उपयोग किया। इन औद्योगिक महत्वाकांक्षाओं और विकास के उन्माद ने समाज की प्रगति का जो मार्ग चुना उसके दूरगामी परिणामों पर चिन्तन न कर अपने भविष्य को संकट में डाल दिया। मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का अनुचित दोहन कर अपने लिए असंख्य सुख-सुविधाएँ अर्जित करता रहा।

> इतना ही नहीं, अपने विस्तृत साम्राज्य को बनाए रखने के लिए अधिक-से-अधिक विनाशकारी हथियार बनाए गए।..... वैज्ञानिकों ने निरंतर प्रयोग करके ऐसे विस्फोटक अस्त्र-शस्त्र निर्मित किए जो आँख झपकते ही भारी विनाश कर सकते थे। कल-कारखानों का विस्तार हो अथवा सामरिक हथियारों का निर्माण, सभी में उन प्राकृतिक साधनों का खुला उपयोग या दुरुपयोग हुआ, जिसके

कारण पर्यावरण के असंतुलन की समस्या विकराल रूप धारण करती गई।
(ख़ानकाही 2003:36)

इसी पर्यावरणीय विनाश की समस्या को उत्तर-आधुनिकता अभिव्यक्ति देती है। अनवर सुहैल की कविता भी मनुष्य के चक्षुओं को आधुनिकता के सांचों से निकाल क्षरित होते पर्यावरण के प्रति दृष्टिपात करने को मजबूर करती है। अपनी एक कविता में ये लिखते हैं कि-

पागलों की दुनिया

कुछ भी बनाना नहीं जानती

उसे आता है सिर्फ

बने-बनाये को तोड़ना

और फिर सदियों की मेहनत

एक आत्मघाती विस्फोट से

तहस-नहस हो जाती है

इतनी अफरा-तफरी के बाद भी

हम देखते हैं ख्वाब

सबके लिए बची रहे पृथ्वी (सुहैल 2023:11)

भोजन मानव की मूलभूत आवश्यकता है, बिना भोजन मनुष्य का गुज़ारा सम्भव नहीं है। किसान द्वारा वर्षभर मेहनत कर भोजन की आपूर्ति करायी जाती रही है। मानव जीवन की उत्पत्ति से लेकर अब तक किसान द्वारा उत्पादित खाद्य सामग्री का उपयोग प्रत्येक जन करता आया है, जिस कारण किसान को 'द्वितीय जीवनदाता' की संज्ञा दी जाती है। भारत की तो 70% अर्थव्यवस्था ही कृषि पर निर्भर है, जिसका संचालक कृषक ही है। यह 'द्वितीय जीवनदाता जो सभी के लिए अन्नापूर्ति कराता है, ख़ुद आज भूखे मरने को विवश है। किसान सालभर मेहनत कर प्राकृतिक आपदाओं और संकटों से लड़ता है –

बादलों की एक एक हरकत को बड़ी तन्मयता से देखता

किसान क्योंकि वह जानता नहीं है

साथ उसके कोई सरकार और न कोई भगवान जो है सो बादल ही हैं

बड़े जतन से सम्भाल कर रखे बीजों को अंकुरित करते हैं पानियों की फुहार से बादल

(सुहैल 2023:137)

समस्त परेशानियों का निवारण कर जब इसे अपनी फ़सल का उचित दाम नहीं मिलता तो यह बुरी तरह टूट जाता है। क़र्ज़ के बोझ के नीचे दबकर आत्महत्या जैसे अनुचित क़दम भी उठा लेता है। अनवर सुहैल की कविता 'मरने के विकल्प' में सरकारी नीतियों के प्रति किसानों का दर्द भी बख़ूबी अभिव्यक्त हुआ है। 'किसान मार्च 2018' नामक कविता में इन नीतियों से परेशान किसान जब अपने हक़ के लिए आवाज़ उठाते हैं तो किस प्रकार इनकी आवाज़ को दबाया जाता है; इसका वर्णन किया गया है।

उत्तर-आधुनिकता उन सभी दबी आवाज़ों के संघर्षों को उभारती है जो वर्षों से किसी-न-किसी केन्द्रीय सत्ता द्वारा दबाकर रखे गए हैं। इसने हाशिये पर छोड़ दिए गए बहुत से अस्मितामूलक विमर्शों को आवाज़ देकर उन्हें मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया है। उत्तर-आधुनिक काल विशाल अस्मिताबोध का जन्मदाता कहा जा सकता है।

> उत्तर-आधुनिकतावाद एक विराट बौद्धिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलन है जिसमें समकालीन दौर के तीव्र प्रौद्योगिकीय परिवर्तन और विषम परिस्थिति में संघर्षरत मनुष्यता की समस्त बौद्धिक सरणियाँ अन्तर्भुक्त है। यह अपने प्रशस्त रूप में उत्तर-संरचनावाद, विखंडनवाद, नारी अधिकारवाद, पर्यावरणवाद, युवा अधिकारवाद मानवाधिकारवाद, विश्वबाजारवाद तथा काले लोगों के संघर्ष जिसे हम भारतीय सन्दर्भ में दलित विमर्श कहते है-जैसे अनेक वैचारिक आन्दोलनों का संश्लेष है। (उपाध्याय 2008:272)

इन्हीं उत्तर आधुनिक विमर्शों को अनवर सुहैल की कविताओं में देखा जा सकता है। इनकी कविताएँ उन सारे वजूद के लिए इलाज की तलाश करती हैं, जिन्हें विभिन्न सत्ताओं ने अलग-अलग समय पर दबाया है। इनका स्वर उन प्रतिरोधी आवाज़ों को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। सदियों से पुरुष की एकाधिकारवादी सत्ता के ख़िलाफ़ स्त्री में स्वातंत्र्य चेतना और अपनी अस्मिता की पहचान की तलाश शुरु हुई। अब तक शोषित और दमित चेतना ने पुरुष की एकाधिकारवादी नीति को चुनौती दी। उत्तर आधुनिक स्त्री ने भावना की अपेक्षा बुद्धि, परंपरावादी चिंतन की अपेक्षा आत्मंथन को महत्व देकर 'मैं' की सत्ता का अनुभव किया। अनवर सुहैल की 'शास्त्र-सम्मत बर्बरता', मुसलमान, दलित या स्त्री और 'तोड़ना ही है

इलाज' आदि कविताओं में वर्चस्ववादी धारा का कड़वा सच देखा जा सकता है। 'लाशें' नामक कविता में इसी वर्चस्ववादी धारा की मनोभावना पर व्यंग्य करते हुए कहा गया है –

एक दलित की

एक स्त्री की

एक नाफ़रमान की

और एक अल्पसंख्यक की लाश

वैसा ही तिरस्कार पाती है

जैसा जीते जी पाते थे। (सुहैल 2023:104)

आमतौर पर देखा जाए तो परम्परावादी नज़रिया नारी को नर के बराबर नहीं देखता और किन्नर को नर-नारी दोनों से हीन समझता है। किन्नर' शब्द ऐसे समाज के लिए प्रयुक्त होता है, जो न तो नर होते है और न ही नारी।

> लोकतान्त्रिक प्रक्रियाओं के तहत विमर्शों पर बात करना काफ़ी समीचीन है। दलित, आदिवासी, नारी-विमर्श के बाद अब किन्नर-विमर्श चर्चा के केंद्र में है। हालांकि संस्कृत में पुल्लिंग स्त्रीलिंग एवं नपुंसकलिंग में से मात्र पुल्लिंग की ही चर्चा होती थी, लेकिन स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान डॉ. भीमराव अम्बेडकर के संविधान के अनुसार सबको समानता प्रदान की गयी। (मेहरा 2019:सम्पादकीय)

यह समानता व्यवहार में यदा-कदा ही दिखाई देती है और आज भी किन्नरों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है जो मनुष्य की पंगु सोच का द्योतक है। उत्तर आधुनिक कवि इस अमानुषिक बर्ताव पर भी अपनी लेखनी चलाता है। अनवर सुहैल कहते हैं -

अकस्मात उन्हें सामने देख

स्तब्ध से हो जाते नर-नारी

गोया वे नहीं हो कोई इंसान!

वे इसी तरह आते हैं

और किसी डरावने स्वप्न की तरह

हमें डराकर लोप हो जाते हैं

उन्हें देखकर माएं समेट लेती हैं बच्चों को

इन बलाओं से क्या डरती हैं सिर्फ माएं ही?

उनके जाने के बाद भी बड़ी देर तक

गूंजती रहती हैं तालियाँ उनकी (सुहैल 2023:91)

अनवर सुहैल की कविता 'किन्नर' में इस दृश्य जगत के उन सभी चित्रों को खींचा जो वर्तमान परिदृश्य की वास्तविक सच्चाई की उस तस्वीर से हमें अवगत कराती है कि किस प्रकार किन्नरों को सामाजिक दायरे से दूर हाशिए पर छोड दिया गया है। 20 सदी के आखिरी दो दशकों से उठे अनेक मुक्तिकामी संघर्ष अपने साथ हुए शोषण की कहानी बयाँ करते हैं। "दलितों द्वारा भारत बंद" नामक कविता में अनवर सुहैल दलितों के प्रतिरोध को आवाज देते हैं तो 'अपमान की बरसी' नामक कविता में आदिवासियों के। आदिवासियों ने भी उन वंचनाओं को बहुत झेला। सरकार की आर्थिक उदारीकरण की नीति जिसने बाज़ारवाद का मार्ग खोल मुनाफ़े और लूट के खेल के मार्ग को प्रशस्त किया। बाजारवादी नीतियों और सत्ता के गठजोड़ ने आदिवासियों के समक्ष अस्तित्व की चुनौती खड़ी की; जल, जंगल, जमीन और जीवन का सौदा कर इनके समक्ष गहरा संकट उत्पन्न किया। 'अपमान की बरसी' नामक कविता में अनवर सुहैल आदिवासियों के प्रति हुए इसी अवसाद, हताशा, अपमान को याद करते हैं। उनके विश्वास का कत्ल किस प्रकार किया गया उसे याद कराते हैं। उत्तर-आधुनिक समय किस प्रकार उनके वजूद को प्रदर्शित करता है; उसकी अभिव्यक्ति इस कविता में देखी जा सकती है-

हमारा वजूद बना दिया गया कितना गैर-जरूरी

हम बार-बार

बताना चाहते हैं कि हमारी मौजूदगी

कोई ऐतिहासिक मजाक नहीं है भाई

हम सच में इस बगिया का हिस्सा हैं

मिट्टी, हवा, पानी और धूप पर

उतना ही हक है हमारा

जितना कि तुम्हारा है (सुहैल 2023:116)

सन् 1990 के दशक से उठा आदिवासियो के प्रतिरोध का स्वर आज साहित्य का मुख्य विषय हैं। अपने विस्थापन की समस्या, अपने ऊपर हुए अन्याय, अत्याचार, अपमान और अपनी सामुदायिक और सांस्कृतिक पहचान की तलाश इनकी कविता का मुख्य उददेश्य रहा है। आदिवासी, स्त्री, दलित, वृद्ध, किसान और पर्यावरण जैसे विमर्शों के अतिरिक्त उत्तर-आधुनिकता अल्पसंख्यक और मुस्लिम विमर्श जैसे नए विमर्श भी केन्द्र में लाती है। 'चुप है वाचाल अकेला' नामक कविता में अल्पसंख्यको के बारे में अनवर सुहैल कहते हैं कि

जिनके पास भाषा है

जो गूंगे नहीं हैं

वे सभी बोल रहे हैं पक्ष में भी, विरोध में भी

यहाँ तक कि लड़ भी ले रहे आपस में

कोई भला कैसे रह सकता है चुप

बस चुप है वो अकेला वाचाल

जो बोल सकता था विरोध न सही

सांत्वना के शब्द ही। (सुहैल 2023:56)

अल्पसंख्यक की संकल्पना ऐसे समुदाय हेतु की जाती है- जो संख्या में कम हो। भारतीय समाज के सन्दर्भ में अल्पसंख्यक मुस्लिम समाज को माना जाता है। उत्तर-आधुनिक कविता में ऐसे समुदायों को भी केन्द्रीय हिस्सा बनाया जा रहा है जो संख्या में अत्यल्प हैं। यूँ तो सिख, ईसाई और पारसी भी संख्या में अत्यल्प हैं पर वे अभी साहित्य का केन्द्रीय विचार नहीं बन पाए है। अभी मुस्लिम समाज ही विमर्श का हिस्सा बन रहा है। 'बुतशिकन' और 'बुर्के और टोपियाँ' नामक कविताओं में मुस्लिम जीवन को अभिव्यक्त कर अनवर सुहैल ने समाज के समक्ष उपस्थित किया है। इन विमर्शों के अतिरिक्त तकनीकी विकास ने किस प्रकार जीवनशैली में बदलाव किया है; उसकी अभिव्यक्ति भी इनकी कविता में होती है।

वर्तमान जगत के तकनीकी विकास से न जाने कितनी पुरानी परंपराएँ पीछे छूट गई हैं। उनके स्थान पर किसी नई व्यवस्था ने अपनी जगह बनाई है। तकनीकी समृद्धि ने सांस्कृतिक समृद्धि के विशाल कलेवर में बदलाव करना शुरू कर दिया है। 'डिजिटल समय में किताबें' नामक कविता में तकनीकी विकास से हाशिए पर जा रही किताब पढ़ने की परंपरा का वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं –

डिजिटल समय में

कितनी गैरजरूरी हो गई हैं किताबें…

ज्ञान हासिल करने के लिए किताबें ही हुआ करती थी साधन (सुहैल 2023:80)

वर्तमान समय तेजी से बदल रहा है। किताबों की जगह तकनीकी उपकरणों ने ले ली है। आज बच्चों को कहानियों से भरी किताबों की कोई इच्छा ही नहीं बची है। उन्होंने इन उपकरणों को ही अपनी दुनिया मान लिया है। इस पर अनवर सुहैल लिखते हैं कि

आज भी बिटिया साथ है लेकिन वह
अपने फोरजी सेट पर उँगलियाँ दौडा रही है
आजकल जरूरी है अनलिमिटेड डाटा पैक
और लम्बे समय का बैटरी बैक-अप
फिर जैसे रिश्ते-नाते दुलार-प्यार की जरूरत नहीं। (सुहैल 2023:81)

तकनीकी विकास नई दुनिया का निर्माण कर रहा है जिससे परंपरागत सामाजिक संस्थाओं की जगह आभासी सामाजिक संस्थाओं ले रही है; जिसके कारण परंपरागत संस्थाओं में शैथिल्य बढ़ रहा है। अनवर सुहैल की कविताएँ इन उत्तर-आधुनिक बदलावों को अंतःसमाहित करती तथा इन बदलावों के प्रति अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करती हैं। अतः अनवर सुहैल के काव्य संग्रह में बहुत-से विमर्श विमर्श का हिस्सा बनते है। इनकी कलम उन सभी विमर्शों के साथ ईमानदारी करती तथा अन्य सामाजिक समस्याओं पर प्रहार करती दिखाई देती है।

अतः कहा जा सकता है कि अनवर सुहैल कृत 'उम्मीद बाक़ी है अभी' काव्य संग्रह उत्तर आधुनिक विमर्शो का पोषक है। उत्तर-आधुनिक समय में उभरते अधिकतर विमर्शों को इस काव्यसंग्रह ने वाणी दी है। अधिकांश अस्मितामूलक विमर्शों की इसमें अभिव्यक्ति हुई है, इन अस्मिताओं के प्रतिरोध की ध्वनियों को इसमें देखा जा सकता है। अपनी कविताओं में इन्होंने अनेक खौफ़नाक मंज़रों, दहशतों से डरे हुए लोगों को तबीयत से लड़ाई लड़ते दिखाया हैं। अनवर सुहैल इन विमर्शों के अस्तित्व के लिए एक उम्मीद का आह्वान करते हैं जिससे उन समूहों के व्यथित मन की पीड़ा पर मरहम लगाया जा सके। इनकी कविताएँ इन समूहों

पर हो रही सदियों की प्रताड़ना का हिसाब माँगती हैं। इन्होंनें शास्त्र-सम्मत बर्बरताओं के लिए अलग-अलग इलाज ढूँढे हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'उम्मीद बाक़ी है अभी' उत्तर-आधुनिक विमर्शों का जीवंत दस्तावेज़ है जिसमें वर्चस्ववादी सत्ताओं को चुनौती देकर हाशिए पर धकेल दिए गए समूहों को केन्द्रीय धुरी दिलाने की हर संभव कोशिश की गई है।

ग्रंथसूची :

उपाध्याय, करुणाशंकर. आधुनिक कविता का पुनर्पाठ. पहला संस्करण . नई दिल्ली: राधाकृष्णा प्रकाशन, 2008.

निश्तर खानकाही, डॉ. गिरिजाशरण अग्रवाल, डॉ. मीना अग्रवाल. पर्यावरण दशा और दिशा . नई दिल्ली : डायमंड पाकेट बुक्स , 2003.

पालीवाल, कृष्णदत्त. उतरआधुनिकतावाद और दलित साहित्य. प्रथम संस्करण . नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2008.

मेहरा, दिलीप. हिंदी साहित्य में किन्नर जीवन. प्रथम संस्करण . नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2019.

श्रीवास्तव, डॉ. रवि. उत्तरआधुनिकता विभ्रम और यथार्थ. प्रथम संस्करण . नई दिल्ली: नेशनल पाब्लिशिंग हाउस, 2006.

सुहैल, अनवर. उम्मीद बाकी है अभी. प्रथम संस्करण . न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, 2023.

******

संपर्क सूत्र :

अरशदा रिज़वी
शोधार्थी
हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय (मेरठ), उ०.प्र०
चलभाष- 6395432859
ई-मेल - arshadarizvi0786@gmail.com

प्रो० नवीन चन्द्र लोहनी
शोध निर्देशक
हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय (मेरठ), उ०.प्र०

शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक: 8; जनवरी-जून,2024; पृष्ठ संख्या : 76-92

तात्त्विक दृष्टि से 'अंधायुग' गीति-नाट्य का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ॰ सिराजुल हक

शोध-सार :

धर्मवीर भारती आधुनिक हिंदी साहित्य जगत के मशहूर लेखक तथा सामाजिक विचारक थे। उन्होंने हिंदी साहित्य की विविध विधाओं पर लेखन-कार्य किया है, जिनमें कहानी, कविता, उपन्यास, निबंध, नाटक, एकांकी, आलोचना आदि चर्चित विधाएँ हैं। इसके अतिरिक्त धर्मवीर भारती अंधायुग साप्ताहिक पत्रिका के प्रधान संपादक भी थे। इस दृष्टि से धर्मवीर भारती हिंदी साहित्य के एक अनोखे व्यक्ति थे, जिनका योगदान हिंदी साहित्य के लिए एक अपरिसीम रहा है। इनका अंधायुग गीति-नाट्य एक उत्कृष्ट कृति है। इसमें महाभारत कालीन कथा के द्वारा आधुनिक कालीन भावबोध को नये आयाम दिया गया है। धर्मवीर भारती ने इस कृति के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक परिस्थितियों पर विचार किया है । इसमें महाभारत कालीन कौरव और पांडवों के युद्ध की विभीषिका, हत्यालीला, विविध उपदेश और अन्य कटु कला-कौशल आदि उजागर किए हैं । इन्हें विषयवस्तु का आधार बनाकर तत्कालीन परिस्थिति की विविध समस्याओं को दर्शाते हुए सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक सौहार्द को बरकरार रखने के लिए एक मिसाल पेश किया है। साथ ही अनागत उज्ज्वल भविष्य की कामना इस कृति का मुख्य उद्देश्य है।

बीज-शब्द : गीति नाट्य, *कथावस्तु, कल्पित पात्र, संवाद, वातावरण, भाषा-शैली, उद्देश्य*

प्रस्तावनाः

धर्मवीर भारती हिंदी साहित्य के एक महान हस्ती थे। अंधायुग नाट्य कृति लिखने के बाद हिंदी नाट्य साहित्य में आधुनिकता का एक भूचाल शुरू हुआ था। यह कृति ऐतिहासिक और पौराणिक कहानी पर आधारित है। इसमें कौरव और पांडव दो पक्ष हैं। इनकी लंबी कहानी है। इनके मूल में सत्ता है। कौरव पक्ष ने अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए न जाने क्या-क्या पंथ अपनाये हैं, जिसका बलि पांडव पक्ष हुआ है । कालक्रमानुसार ये लोग सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म की लड़ाई की ओर अग्रसर हुए, जिसके फलस्वरूप दोनों पक्षों में भयानक रक्तपात, मारकाट, मृत्यु, भ्रूणहत्या आदि विविध क्रियाएँ हुईं। अंत में पांडव पक्ष की विजय होती है, अशांति तथा अधर्म की हार होती है, युधिष्ठिर का राज्याभिषेक किया जाता है, फिर भी शांति कायम नहीं होती है। इसी अशांति के बीच कृष्ण के विविध उपदेश उल्लेखनीय है। जो इस अंधायुग गीति

नाट्य के संवादों में देखने को मिला है। अतः धर्मवीर भारती ने मानव कल्याण तथा सुखद भविष्य की चिंता-चर्चा की है।

विश्लेषणः

धर्मवीर भारती द्वारा रचित अंधायुग एक प्रसिद्ध गीति नाट्य है, जिसकी कथावस्तु ऐतिहासिक और पौराणिक कथा का मिश्रण है। इसके साथ-साथ गीति नाट्य में कल्पित कथा और ऐतिहासिक घटनाओं का समाहार देखने को मिलता है। आज इसकी कथावस्तु जगजाहिर है। इस गीति नाट्य के मूल में महाभारत के प्रमुख पात्र श्रीकृष्ण, धृतराष्ट्र, गांधारी, संजय, कृपाचार्य, कृतवर्मा, विदुर, व्यास, युधिष्ठिर, बलराम आदि हैं। इसे विस्तारित रूप प्रदान करने के लिए स्वरचित कुछ काल्पनिक पात्र का भी संयोजन किया गया है, जिसमें वृद्ध याचक, गूँगा भिखारी, दो प्रहरी आदि शामिल हैं। इन सारे ऐतिहासिक तथा कल्पित पात्र के माध्यम से अंधायुग गीति नाट्य की कथावस्तु का विस्तृत आकार मिला है। इस गीति नाट्य की विषयवस्तु दो ऐतिहासिक पक्ष के क्रियाकलाप पर आधारित है, जिसमें एक पांडव पक्ष, दूसरा कौरव पक्ष है। अंधायुग गीति-नाट्य की दृष्टि से स्पष्ट होता है कि दोनों पक्ष एक-दूसरे के विपरीत मेरु में विराजमान है। जो केवल सत्ता के लिए लालायित हैं। इसी को केंद्रीय बिंदु बनाकर सत्य-असत्य की लड़ाई को धर्मयुद्ध में बदल दिया गया। इस गीति नाट्य की कथावस्तु महाभारत के 18 वें दिन की संध्या से लेकर प्रभास-तीर्थ में श्रीकृष्ण की मृत्यु के क्षण तक फैली है ।

धर्मवीर भारती ने अंधायुग गीति नाट्य की शुरूआत स्थापना तथा अंधायुग के मंगलाचरण और उद्घोषणा करते हुए किया है। इसके बाद कथावस्तु तथा विषयवस्तु का पूर्ण रूप पाँच अंकों में समाप्त होता है। लेकिन गीति नाट्य के बीच में अंतराल और अंत में समापन भी है। जो कथावस्तु के विशेष रूप में सहायक बनते हैं। पहले अंक में कौरव नगरी की कथा है, जिसमें गायन करते हुए दोनों पक्ष की घमासान लड़ाई की चर्चा होती है। इसका परिणाम सुनने के लिए धृतराष्ट्र और उनकी धर्म पत्नी गांधारी उतावले हो जाते हैं। धृतराष्ट्र कहते हैं-

> देखो।
>
> विदुर देखो! संजय आये। (भारती 2023:14)

इसी को आड़ में लेकर गांधारी कहती है-

> होगी,
>
> अवश्य होगी जय।

मेरी यह आशा

यदि अन्धी है तो है

पर जीतेगा दुर्योधन जीतेगा। (भारती 2023:16)

ऐसे ही कौरवपति धृतराष्ट्र जन्मांधता और आजीवन अपनी आँखों पर पट्टी चढ़ाये रखनेवाली माता गांधारी कौरवों की जीत की उम्मीद पर कायम रहे। अंक दो में पशुत्व का उदय होता है। इसमें अश्वत्थामा की कार्य-लीला का वर्णन किया है। वह अपने पिता द्रोणाचार्य की मृत्यु तथा युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य पर क्रोधित हो जाता है। उसकी क्रोध की सीमा अवर्णनीय है, क्योंकि उसने संजय को भी नहीं छोड़ा। उसने संजय को पांडव पक्ष का योद्धा समझकर मारने का प्रयास किया। बाद में संजय किसी तरह बचकर निकलता है, किंतु वृद्ध याचक को जान से मार देता है। वह कहता है-

वध, केवल वध, केवल वध

मेरा धर्म है। (भारती 2023:33)

इसी तरह तीसरे अंक शुरू होता है, जिसमें अश्वत्थामा का अर्द्धसत्य रखा गया है। इसमें कौरवपति धृतराष्ट्र के बेटे युयुत्सु की घर वापसी होती है। किंतु वहाँ पर उसे चैन-सुकून नहीं मिलता है, उसकी माता गांधारी की कटुता भरी बातें युयुत्सु की हृदयात्मा को छलनी कर देती है। वह कहता है-

यह क्या किया?

माँ ने यह क्या किया

विदुर?

X x x x x x

अच्छा था यदि मैं

कर लेता समझौता असत्य से। (भारती 2023:44)

इसी अंक में गूँगे सैनिक की चर्चा होती है। जिसे खुद युयुत्सु ने घायल किया था और वह किसी तरह बचकर निकला था। उसकी मुलाकात विदुर के माध्यम से अपने ही घर में हुई थी, विदुर ने उस सैनिक को पानी पिलाने को कहा, और युयुत्सु ने भी पानी पिलाने का प्रयास किया, लेकिन वह डर के मारे भाग निकला। इस घटना के साथ-साथ अश्वत्थामा का उत्तेजित रूप देखने को मिलता है। वह किसी की बात सुनने के लिए तैयार नहीं होता है। वह पांडवों से बदला लेने के लिए पांडव शिविर की ओर रवाना होता है, किंतु रास्ते में विराटकाय दैत्य पुरुष का सामना करता है। यह दृश्य अंतराल में उपलब्ध होता है।

चौथे अंक में गांधारी का शाप दृष्टव्य है। इसमें अश्वत्थामा की हत्या-लीला के बारे में संजय के माध्यम से गाँधारी को सुनाया जाता है। जिसमें संजय ने हत्या-कांड के बारे में बताते हुए कहा कि अश्वत्थामा ने

पांडव पक्ष के शिविर में प्रवेश कर धृष्टद्युम्न को अपने पंजों से गला दबोचकर मार दिया, फिर अपने अस्त्रों से शतानीक के घुटने काट दिए और शिखंडी के माथे पर वाण मारा, जोकि उसका मस्तक फाड़ धरती के अंदर समा गया। इन सारी बातों को सुनने के बाद गांधारी उस दृश्य को देखने के लिए लालायित हो जाती है। गाँधारी कहती है-

ठहरो
संजय ठहरो
दिव्यदृष्टि से मुझको दिखला दो एक बार
वीर अश्वत्थामा को।
.....
जो मेरे सौ पुत्र नहीं कर पाये
द्रोण नहीं कर पाये!
भीष्म नहीं कर पाये! (भारती 2023:65)

संजय कहता है-

माता
व्यास ने मुझको दिव्यदृष्टि दी थी
केवल युद्ध की अवधि के लिए
पता नहीं कब वह सामर्थ्य मुझसे छिन जाये। (भारती 2023:65)

अंत में संजय की दिव्यदृष्टि खत्म हो जाती है और गाँधारी भी अश्वत्थामा की हत्या-लीला को देखने की आशा स्वप्न की तरह रह जाता है। इधर अश्वत्थामा पांडवों के वीर योद्धा को मारकर शांत नहीं रहा, वह पांडवों की वंश परंपरा को मिटाने के लिए गर्भवती उत्तरा की ओर निशाना लगाकर ब्राह्मास्त्र निक्षेप करता है। जिससे भ्रूण की हत्या हो जाती है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-

यदि वह ब्रह्मास्त्र गिरता है तो गिरे
लेकिन जो मुर्दा शिशु होगा उत्पन्न
उसे जीवित करूँगा मैं देकर अपना जीवन। (भारती 2023:65)

इसी प्रतिज्ञा के साथ अश्वत्थामा को ढूँढने के लिए कृष्णार्जुन निकल पड़ते हैं। फिर अश्वत्थामा को पकड़ भी लिया जाता है। लेकिन उसे भ्रूण हत्या का शाप देकर छोड़ देते हैं। जो विदुर ने धृतराष्ट्र को कहा है-

छोड़ दिया!
केवल भ्रूण-हत्या का शाप
उसे दिया और
उससे मणि ले ली.....। (भारती 2023:78)

इसी शाप की बात गांधारी को पता चलने के बाद गाँधारी संजय से कहती है-

संजय उसे रोको!

लोहा मैं लूँगी आज कृष्ण से उसके लिए। (भारती 2023:78)

अर्थात् गाँधारी ने श्रीकृष्ण से बदला लेने के लिए कृष्ण को शाप दिया है। जो इस प्रकार है-

सारा तुम्हारा वंश

इसी तरह पागल कुत्तों की तरह

एक-दूसरे को परस्पर फाड़ खायेगा

तुम खुद उनका विनाश करके कई वर्षो बाद

किसी घने जंगल में

साधारण व्याध के हाथों मारे जाओगे। (भारती 2023:80)

श्रीकृष्ण ने गांधारी को अपनी माता समझकर शाप को स्वीकार किया।

धर्मवीर भारती ने अंधायुग गीति नाट्य के अंक पाँच में विजयः एक क्रमिक आत्महत्या रखी है। इसमें युधिष्ठिर का राज्याभिषेश घोषित किया गया है, साथ ही साथ पूर्व राज्य(अंध धृतराष्ट्र) की शासन व्यवस्था और धर्म परायण युधिष्ठिर के राज्य की शासन व्यवस्था की तुलना करते हुए राज्य के विविध आत्मघातों की चर्चा की है। यहाँ पर आप युयुत्सु की मृत्यु, रक्तपात की घटना, विविध हत्या व ध्वंसलीला, भीषण दावाग्नि की घटना आदि देख सकते हैं। ऐसी घटना तथा स्थिति से हस्तिनापुर तथा कौरव नगरी ऊँब चुकी थी । युधिष्ठिर कहते हैं-

और विजय क्या है

एक लम्बा और धीमा

और तिल-तिल कर फलीभूत

होने वाला आत्मघात

और पथ कोई भी शेष

नहीं अब मेरे आगे। (भारती 2023:81)

ऐसी स्थिति के बाद समापन प्रभु की मृत्यु से शुरुआत होती है, जिसमें वन्दना करते हुए कथा गायन आगे बढ़ता है। श्रीकृष्ण की मृत्यु होते ही सभी नक्षत्र बूझकर सारी दुनिया में भयंकर अंधकार छा गया। किंतु कृष्ण कहते हैं-

मरण नहीं है ओ व्याध

मात्र रूपांतर है यह

सबका दायित्व लिया मैंने अपने ऊपर

अपना दायित्व सौंपकर जाता हूँ मैं सबको

.....

क्योंकि इनका दायित्व लिया है मैंने। (भारती 2023:96)

इतना ही फिर कहा-

लेकिन शेष मेरा दायित्व लेंगे

बाकी सभी.....

x….x…..x……x…..x

जीवित और सक्रिय हो उठँगा मैं बार बार। (भारती 2023:105)

अतः उपरोक्त विचार से यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि अंधायुग जैसी रचना के माध्यम से मानव-भविष्य पर प्रश्न उठाते हुए मानव-मूल्य की प्रतिष्ठा की ओर ध्यानाकर्षण करना और अनागत भविष्य की सुरक्षा का चरितार्थ करना इस गीति नाट्य की मूल कथावस्तु है।

अंधायुग गीति-नाट्य की मूल कथावस्तु को गति प्रदान करने के लिए पात्रों का योगदान अपरिसीम है। अंधायुग गीति-नाट्य में कुल 16 पात्र हैं। इसमें से कुछ प्रमुख पात्र है- श्रीकृष्ण, अश्वत्थामा, वृद्ध याचक और दो प्रहरी। इनके साथ-साथ कुछ गौण पात्र की भूमिका उल्लेखनीय है। उसमें से गांधारी, विदुर, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, कृतवर्मा, संजय, युयुत्सु, व्यास, बलराम आदि। इन पात्रों के माध्यम से पौराणिक महाभारत की ऐतिहासिक घटनाओं को नवीन रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें महाभारत के 18 वें दिन की संध्या से प्रभास तीर्थ में कृष्ण की मृत्यु तक की घटनाओं का चित्रण किया गया है। कहीं-कहीं प्रतीकात्मक पात्र का सहारा लेकर आधुनिक भावबोध पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इस गीति-नाट्य के सभी पात्रों का अहम किरदार रहा है। कथावस्तु की दृष्टि से किसी भी पात्र की भूमिका कम नहीं है। स्थान-काल विशेष कहीं-कहीं पात्र की भूमिका में उतार-चढ़ाव है। लेकिन सभी पात्रों अपने-अपने क्षेत्र में अच्छी भूमिका निभाई है। इस गीति-नाट्य में से हम ऐसे ही किसी एक भी पात्र को छोड़ नहीं सकते हैं, क्योंकि नाटक की कथावस्तु पात्र के ऊपर निर्भरशील है। ऐसे पात्रों में अश्वत्थामा, युयुत्सु, गांधारी, विदुर, धृतराष्ट्र, संजय, श्रीकृष्ण आदि। इन सभी पात्र परिस्थिति के साथ रूप धारण किये हैं। इसमें अश्वत्थामा का योगदान उल्लेखनीय है। वह युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य और द्रोणाचार्य की मृत्य के साथ-साथ श्रीकृष्ण के इशारे पर दुर्योधन पर भीम का अधर्मात्मक प्रहार आदि की वजह से उसके मन में प्रतिहिंसा की दावाग्नि सुलग रही थी। वह हिंसक पशु बन गया था, साथ ही इंसानियत नामक चीज को भूल चुका था। वह कहता है-

वध, केवल वध, केवल वध

मेरा धर्म है। (भारती 2023:106)

इसमें खासकर प्रतिहिंसा को उजागर करते हुए क्रूरता तथा अन्यायी शासन व्यवस्था के खोखले स्वरूप के विभिन्न रूपों का चित्रण किया गया है।

अंधायुग गीति-नाट्य में गांधारी की भूमिका एक पक्षीय रही है. क्योंकि उसने अंधी न होते हुए भी आजीवन अपनी आँखों में पट्टी बांधे रखने की प्रतिज्ञा की थी, वह यहाँ तक सीमित नहीं रहीं, उसने आगे जाकर नरसंहार रूपी दानव अश्वत्थामा की हत्या-लीला पर भी खुशी जाहिर की है, जो इस प्रकार है-

काश कि मैं अपनी आँखों से
देख पाती यह?
कैसी ज्योति से घिरा होगा तब अश्वत्थामा! (भारती 2023:33)

वह और कहती है-

ठहरो
संजय ठहरो
दिव्यदृष्टि से मुझको दिखला दो एक बार
वीर अश्वत्थामा को। (भारती 2023:64)

गांधारी फिर कहती है-

संजय,
संजय, मेरी पट्टी उतार दो
देखूँगी मैं अश्वत्थामा को
वज्र बना दूँगी उसके तन को
संजय
लो मैंने यह पट्टी उतार फेंकी
कहाँ है अश्वत्थामा। (भारती 2023:64)

यहीं नहीं, उसका एक और रूप अपने बेटे युयुत्सु के प्रति देखने को मिलता है। युयुत्सु सत्य के साथ रहकर असत्य के खिलाफ तथा अधर्म के विरुद्ध लड़ता रहा, जिसकी वजह से उसे अपनी माँ गांधारी के तिरस्कार, अपमान, प्रताड़ना आदि का बलि होना पड़ा। उसकी माँ गांधारी की हास्य-व्यंग्यात्मक बातों के प्रहार से वह मर्माहत हो जाता था। युयुत्सु कहता है-

अच्छा था यदि मैं
कर लेता समझौता असत्य से। (भारती 2023:68)

अतः युयुत्सु अंधायुग गीति-नाट्य का एक महत्वपूर्ण पात्र है, जिसने सत्य से समझौता करते हुए असत्य को नकार दिया तथा आजीवन सत्य पर कायम रहकर अपनी जिंदगी की कुर्बानी दी है। कृपाचार्य कहते हैं-

युधिष्ठिर के राज्य में
नियति है यह युयुत्सु की

जिसने लिया था पक्ष धर्म का। (भारती 2023:44)

आगे फिर कृपाचार्य कहते हैं-

रक्त ये युयुत्सु के
लिख जो दिया है उन हमलों की भूमि पर
समझ नहीं रहे हैं उसे ये आज! (भारती 2023:89)

अंत में दोनों पक्षों की लड़ाई में पांडव पक्ष की जीत होती है, उसमें हस्तिनापुर तथा अन्य प्रांत में भी शांति कायम नहीं हुई थी। राज्य के चारों ओर से अशांति तथा मारकाट की ध्वनि सुनाई देती थी। ऐसी स्थिति से युधिष्ठिर खुद को हारा हुआ महसूस करता है । युधिष्ठिर कहता है-

ऐसे भयानक महायुद्ध को
अर्द्धसत्य, रक्तपात, हिंसा से जीत कर
अपने को बिलकुल हारा हुआ अनुभव कर
यह भी यातना ही है
.....
मेरे ये कुटुंबी अज्ञानी हैं, दुर्विनीत हैं
या जर्जर है। (भारती 2023:90)

अंधायुग गीति-नाट्य में विदुर की भूमिका अन्य पात्र से कम नहीं है। वह हस्तिनापुर तथा कौरव नगरी के हितैषी है। इतना ही नहीं कौरव संतान तथा घायल युयुत्सु के प्रति आत्मीयता की भावना व्यक्त करते हुए युधिष्ठिर से कहते हैं –

यदि जीवित है
तो आप उसे भेज दें
मेरी ही कुटिया में
रक्षा करूँगा, परिचर्या करूँगा
उसने जो भोगा है कृष्ण के लिए अब तक
उसका प्रतिदान जहाँ तक मैं दे पाऊँगा
दूँगा..... (भारती 2023:85)

इसी गीति-नाट्य में महान भूमिका निभाने वाले प्रभु श्रीकृष्ण का अवदान उल्लेखनीय हैं। उन्होंने धर्म को बचाने के लिए अहम योगदान दिया है। इसी धर्म के लिए कभी-कभी अधर्म का रास्ता अपनाया। गदाधारी भीम और दुर्योधन का गदा युद्ध एक सशक्त उदाहरण है। इसी तरह एक ओर उदाहरण है, जो अश्वत्थामा की बर्बर हत्यालीला से संबंधित है। जब अश्वत्थामा ने भ्रूण हत्या के लिए ब्राह्मास्त्र निक्षेप किया था, तब प्रभु श्रीकृष्ण ने अपनी जान देकर शिशु को बचाने की प्रतिज्ञा ली थी। जो इस प्रकार है-

यदि यह ब्राह्मास्त्र गिरता है तो गिरे
लेकिन जो मुर्दा शिशु होगा उत्पन्न
उसे जीवित करूँगा मैं देकर अपना जीवन। (भारती 2023:91)

वे यहाँ तक सीमित नहीं रहते हैं। प्रभू श्रीकृष्ण की मृत्यु के समय संसार रूपी मानव को संदेश देते हुए कहते हैं-

लेकिन शेष मेरा दायित्व लेंगे
बाकी सभी.....
मेरा दायित्व वह स्थित रहेगा
हर मानव-मन के उस वृत्त में
.....
जीवित और सक्रिय हो उठूँगा मैं बार-बार। (भारती 2023:78)

इससे स्पष्ट होता है कि अंधायुग गीति-नाट्य के सभी पात्र की भूमिका अपरिसीम है। जिसके माध्यम से मानवीय मूल्यों के उतार-चढ़ाव देखने को मिला है। इन पात्रों के चरित्र-चित्रण से तत्कालीन समस्याओं तथा भावबोध को उजागर करते हुए आधुनिक भावबोध पर प्रकाश डालने का अहम प्रयास रहा है। साथ ही मानव मूल्य की प्रतिष्ठा करने के लिए प्रभु श्रीकृष्ण का प्रयास अवर्णनीय है।

संवाद योजना नाटक की विषयवस्तु का मूल आधार है। इसका स्थान सर्वोपरि है। यह नाटक की विषयवस्तु और चरित्र-चित्रण का धागा स्वरूप है। इसके ऊपर कथावस्तु और चरित्र-चित्रण निर्भरशील है, क्योंकि संवाद के माध्यम से नाटक की कथावस्तु और चरित्र-चित्रण का पूर्ण रूप परिस्फुटित होता है। साथ ही साथ नाटक विकास की ओर अग्रसर होता है। दरअसल संवाद योजना स्पष्ट और पाठक या श्रोता के अनुकूल होना चाहिए, इसके लिए सहज-सरल भाषा की भी जरूरत होती है। इस दृष्टि से देखा जाये तो अंधायुग गीति-नाट्य की संवाद योजना सहज-सरल, संक्षिप्त और पात्र के अनुकूल है। जिसकी तस्वीर अंधायुग गीति-नाट्य में देखने को मिली है। जिसका उदाहरण इस प्रकार है-

प्रहरी 1. सुनते हो
कैसी है ध्वनि यह
भयावह?
प्रहरी 2. सहसा अंधियारा क्यों होने लगा
देखो तो
दीख रहा है कुछ? (भारती 2023:106)

इसी तरह एक ओर संवाद योजना है, जो सहज-सरल और स्पष्ट है। जैसे-

धृतराष्ट्र. विदुर!

जीवन में प्रथम बार
आज मुझे आशंका व्यापी है।

विदुर. आशंका?
आपको जो व्यापी है आज
वह वर्षो पहले हिला गयी थी सबको। (भारती 2023:5)

यहाँ तक ही नाटक की संवाद योजना खत्म नहीं होती है, क्योंकि नाटक की शुरुआत से लेकर अंत तक संवाद योजना की विशेष भूमिका रहती है। यह नाटक को सफल बनाने का काम करता है। एक और उदाहरण-

युयुत्सु. यह सब मैं सुनूँगा
और जीवित रहूँगा
किन्तु किसके लिए
किन्तु किसके लिए।

धृतराष्ट्र. मेरे अंधेपन से तुम थे उत्पन्न पुत्र!
वही थी तुम्हारी परिधि!
उसका उलंघन कर तुमने
जो ज्योतिवृत्त में रहना चाहा....

विदुर. क्या वह अपराध था? (भारती 2023:8)

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अंधायुग गीति-नाट्य की लोकप्रियता के केंद्र में संवाद-योजना है। जिसका योगदान अतुलनीय है। क्योंकि इसने नाटक की पृष्ठभूमि से लेकर समापन तक तथा नाटक के आरंभ और विकास से लेकर नाटक को पूर्णांग रूप प्रदान करने के लिए अपरिसीम भूमिका निभाई है। इसी गुणवत्ता के कारण अंधायुग गीति-नाट्य आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

साहित्य की विषयवस्तु वातावरण पर निर्भरशील है। जो सजीवता और गरिमा प्रदान करने में काम करता है। इसलिए नाटक तथा अन्य विधा के लिए वातावरण अत्यंत आवश्यक है। इसी वातावरण पर नाटक का सौंदर्य कायम है। यह देशकाल की विविध परिस्थिति तथा परंपरा के अनुसार रूप धारण करता है, साथ ही भौगोलिक सीमा तथा ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वर्णित होता है। अंधायुग गीति नाट्य ऐतिहासिक महाभारत कालीन कथा तथा पौराणिक घटनाएँ सन्निविष्ट हैं। इसलिए नाटक के तत्त्व वातावरण की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। इसके माध्यम से उस समय की वेशभूषा, रीति-रिवाज, प्रकृति, कला-संस्कृति आदि से परिचित हो सकते हैं।

अंधायुग गीति-नाट्य में महाभारत के 18 वें दिन की संध्या से लेकर प्रभास तीर्थ में कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक के कथा-काल वर्णित है। अंधायुग गीति-नाट्य के प्रथम अंक में कथा-गायन तथा उद्घोषणा के साथ-

साथ हस्तिनापुर तथा कौरव नगरी के राजमहल का वर्णन मिलता है। जिसके रक्षक दो प्रहरी आपस में बात करते हुए इस गीति-नाट्य में परिलक्षित होते हैं। उनके देशकाल से संबंधित संवाद इस प्रकार है-

प्रहरी1- थके हुए हैं हम,
पर घूम-घूम पहरा देते हैं
इस सूने गलियारे में

प्रहरी2- सूने गलियारे में
जिसके इन रत्न-जरित फर्शों पर
कौरव बधुएँ
मंथर-मंथर गति से
सुरभित पवन-तरंगों-सी चलती थीं
आज वे विधवा हैं। (भारती 2023:72)

इसमें दोनों प्रहरी अपने कर्तव्य को निभाते हुए 18 वें दिन के युद्ध का परिणाम स्वरूप कौरव-वधुओं की उदासीनता और परेशानी की चर्चा करते हैं। क्योंकि जो वधुएँ महल में हँसी-खुशी, चहल-कूद करते हुए पूरे महल में विचरण करती थीं, वही वधुएँ युद्धोपरांत विधवा बनकर उदासी, खामोसी, बेबच-लाचार, सूना जीवन बीता रही थीं। ऐसे गंभीर देशकाल की परिस्थिति इस गीति-नाट्य में देखने को मिलता है।

महाभारत का युद्ध 18 वें दिन तक चला। जिसमें कौरव तथा पांडव दोनों पक्ष के वीर योद्धाओं की मृत्यु हो चुकी थीं। युद्ध के परिणाम के संदर्भ में विदुर ने धृतराष्ट्र को बताते हुए कहा-

महाराज।
विह्वल है सारा नगर आज
बचे-खुचे जो भी दस-बीस लोग
कौरव नगरी में हैं
अपलक नेत्रों से
कर रहे प्रतीक्षा हैं
संजय की। (भारती 2023:4)

दोनों पक्ष में घमासान लड़ाई होने के बाद मुट्ठीभर लोग कौरव नगरी में बचे रहें, जो केवल संजय की राह देख रहे थें और वे सोच रहे थे कि कब तक संजय कौरव नगरी में लौटकर आयेंगे? और युद्ध के परिणाम तथा सारे दृश्य वर्णन करेंगे? इसी सोच के साथ गांधारी और धृतराष्ट्र भी अपेक्षा करते-करते महल के अंदर पानी बिन मछली की तरह छटपटा रहे थें। उन्हें केवल दुर्योधन की जीत पर उम्मीदें लगी हुई थीं। इसलिए बार-बार संजय के बारे में पूछते थे, क्योंकि संजय महाभारत के युद्ध का गवाह था। उसके सामने ही महाभारत का युद्ध हुआ, उस युद्ध की सारी घटनाओं को अपनी आँखों से देखा। इसलिए वह भी बड़ी समस्या

में पड़ा था कि कैसे गांधारी तथा धृतराष्ट्र के सामने दुर्योधन के हार के बारे में वर्णन किया जाये? संजय ने कहा-

भटक गया हूँ
मैं जाने किस कंटक-वन में
पता नहीं कितनी दूर हस्तिनापुर है,
कैसे पहुँचूँगा मैं?
जाकर कहूँगा क्या
इस लज्जा जनक पराजय के बाद भी
क्यों जीवित बचा हूँ मैं? (भारती 2023:8)

अंधायुग गीति-नाट्य में अश्वत्थामा का प्रतिहिंसात्मक तथा विद्रोहात्मक वातावरण वर्णनीय है। उसकी प्रतिहिंसात्मकता की आग इतनी भयावह थी कि उसने वृद्ध याचक, शतानीक, धृष्टद्युम्न की मृत्यु, भ्रूण हत्या, शिखण्डी पर प्रहार, पांडव शिविर पर आक्रमण आदि अनगिनत हत्यालीला जैसी परिस्थिति को जन्म दिया था। वह कहता है-

मेरे पिता थे अपराजेय
अर्द्धसत्य से ही
युधिष्टिर ने उनका
वध कर डाला।
.....
उस दिन से मेरे अंदर भी
जो शुभ था, कोमलमय था,
.....
उस दिन से मैं हूँ
पशु मात्र, अन्ध बर्बर पशु। (भारती 2023:21)

इसी तरह अनगिनत वातावरणात्मक दृश्य देखने को मिलता है, जिसमें कुछ दृश्य इस प्रकार है- आसमान में गिद्धों उड़ना, वृद्ध याचक का प्रेतात्मक रूप वर्णन, गुँगे सैनिक का प्रसंग, गांधारी का शाप, दुर्योधन का सरोवर में छिपना, आत्मघात का वर्णन, युधिष्ठिर का राजपाट ग्रहण, राज्याभिषेक के बाद युधिष्ठिर की मानसिक व्यथा का वर्णन आदि। इस प्रकार वातावरण तथा देशकाल के विविध रूप अंधायुग गीति-नाट्य में देखने को मिला है।

किसी भी साहित्यिक विधा के लिए भाषा-शैली अत्यंत आवश्यक है। इसमें चाहे नाटक, कहानी तथा उपन्यास आदि विधा हों, इन सब विधाओं के लिए भाषा-शैली अत्यंत मायने रखती है। नाटक दृश्य काव्य है,

इसके केंद्र में आम जनता है। उन्हें मोहित करने के लिए भाषा-शैली की दरकार है। इसकी वजह से लोगों के दिलोदिमाग पर वार कर सकते हैं। परिणाम स्वरूप रचना को अधिक लोकप्रियता मिलती है। इस दृष्टि से अंधायुग एक सक्षम गीति-नाट्य है। जिसमें नाट्यकार धर्मवीर भारती ने अंधायुग गीति-नाट्य में संस्कृत, उर्दू, तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों का प्रयोग करते हुए शब्दशक्ति, बिंब योजना, अलंकारनिष्ट भाषा का भी कहीं-कहीं प्रयोग किया है।

संस्कृत भाषा-

नारायणम् नमस्कृत्य नरम् चैव नरोत्तमम्।
देवीम् सरस्वतीम् व्यासम् ततो जयमुदीयरेत्। (भारती 2023:25)

सहज-सरल भाषा-

शांत रहो, शांत रहो,
गांधारी शांत रहो। (भारती 2023:1)

शब्द शक्ति-

हृदय तुम्हारा पत्थर का है गांधारी। (भारती 2023:12)

बिंब योजना-

वाणी हो सत्य धर्मराज की।
मेरी इस पसली के नीचे
दो पंजे उग आयें
मेरी ये पुतलियाँ
बिन दाँतों के चीथ खायें। (भारती 2023:26)

अलंकार योजना-

धर्मवीर भारती ने अंधायुग गीति-नाट्य में अनेक अलंकारों का प्रयोग किया है। जिसमें रूपक, वक्तोक्ति, श्लेष, पुनरोक्ति, उपमा, विप्सा, अतिशयोक्ति, मानवीकरण अलंकार आदि की भूमिका उल्लेखनीय रही है। अलंकार योजना का एक दृष्टव्य इस प्रकार है-

पागल कुंजर
से कुचली कमल-कली की भाँति
छोड़ूँगा नहीं उत्तरा को भी
जिसमें गर्भित है
अभिमन्यु-पुत्र
पांडव कुल का भविष्य। (भारती 2023:56)

अंधायुग गीति-नाट्य में शैली का भी भरपूर प्रयोग हुआ है। जिसमें व्यंग्य शैली, विवरणात्मक शैली, विचारात्मक शैली, भावात्मक शैली, सूक्ति शैली, चित्रशैली आदि उल्लेखनीय है। व्यंग्यात्मक शैली का एक उदाहरण-

विदुर- आशंका?

आपको जो व्यापी है आज

वह वर्षो पहले हिला गयी थी सबको। (भारती 2023:8)

इसके अतिरिक्त कृपाचार्य, कृष्ण, धृतराष्ट्र, संजय, वृद्ध याचक आदि पात्रों के माध्यम से विवरणात्मक शैली, विचारात्मक शैली, भावात्मक शैली का प्रयोग मिलता है। दो प्रहरी तथा वृद्ध याचक के सवादों में सूक्ति तथा चित्र शैली के विविध संकेत मिलता है। अतः भाषा-शैली की दृष्टि से अंधायुग गीति-नाट्य एक सफल नाटक है।

साहित्यकार समाज का आधार स्तंभ है। साहित्य उसकी प्रतिच्छवि है। धर्मवीर भारती आधुनिक युग के नये मूल्यबोध पर सत्यता से अपनी बात प्रकट करनेवाले महान साहित्यकार हैं। उन्होंने अंधायुग गीति-नाट्य के माध्यम से पौराणिक कहानी और घटनाओं को नये प्याले में या साँचे में रखने का प्रयास किया है। साथ ही इस गीति-नाट्य के माध्यम से धर्मवीर भारती ने नवीन परिवेश तथा नये युगबोध को भी जागृत किया है। भारती ने प्राचीन अंधत्व तथा नग्न यथार्थ को नकारते हुए आधुनिक मूल्यबोध की खोज पर अधिक बल प्रयोग किया है। मूल रूप में मानव जाति को अंध पशुत्व, युद्ध जैसी विभीषिका भरी प्रतिहिंसा, एक-दूसरे के खिलाफ विरूप प्रतिक्रिया और उनकी अंधी संस्कृति से निकल कर चेतन भरी संस्कृति की ओर संकेत तथा जागरूक करना इस गीति-नाट्य का एकमात्र उद्देश्य है।

बम संस्कृति कितनी भयावह होती हैं, इसका चित्रण धर्मवीर भारती ने अंधायुग गीति-नाट्य में किया है। इस गीति-नाट्य की बम संस्कृति के केंद्र में भारती ने अश्वत्थामा को रखा है। उसकी प्रतिहिंसा की आग थमने का नाम नहीं ले रही थी । वह ब्राह्मास्त्र की मदद लेता है। जिसके माध्यम से नरसंहार कर देता है। ऐसी ब्राह्मास्त्र रूपी खतरनाक संस्कृति का परिणाम चित्रित करते हुए भयावह परिस्थिति के प्रति संकेत किया है। आज भी ऐसी परिस्थिति देखने को मिलती है। अश्वत्थामा के ब्राह्मास्त्र प्रक्षेपण के संदर्भ में व्यास कहते हैं-

मैं व्यास हूँ।

ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्राह्मास्त्र का?

यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु!

तो आगे आने वाली सदियों तक

पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी

शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुष्ठग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी
जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने
सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में
सदा-सदा के लिए होगा विलीन वह
गेहूँ की बालों में सर्प फुफकारेंगे
नदियों में बह-बह कर आयेगी पिघली आग। (भारती 2023:75)

फिर व्यास ने कहा-

सूरज बुझ जायेगा।
धरा बंजर हो जायेगी। (भारती 2023:76)

जिस प्रकार व्यास अश्वत्थामा को समझा कर थक चुके थे, फिर भी अश्वत्थामा पर कोई असर नहीं पड़ा था। ब्राह्मास्त्र प्रक्षेपण किया, परिणाम स्वरूप अनेक भ्रूणहत्या हुई थी। धर्मवीर भारती ने अश्वत्थामा के माध्यम से तटस्थता के विनाश की बात की है। जिसे नर तथा देश के शत्रु के रूप में आख्यायित करते हुए तटस्थता को अर्थहीन बताया है। जो इस प्रकार है-

तटस्थ?
मातुल मैं योद्धा नहीं हूँ
बर्बर पशु हूँ
यह तटस्थ शब्द
है मेरे लिए अर्थहीन। (भारती 2023:28)

अंधायुग गीति-नाट्य के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि महाभारत के युद्ध कौरव-पांडव के बीच में हुआ था। ये सब अपने आत्मीय लोग थे। फिर भी ये लोग आपस में सुलह तथा शांति कायम नहीं कर पाये थे। फिर आज एक संप्रदाय से दूसरे संप्रदाय के साथ कैसे अपना भाईचारा बरकरार रख पायेगा? अस्त्र-शस्त्र बन रहे हैं। जिसका कुछ उपयोग हुआ, कुछ हो रहा है और कुछ आनेवाले समय में होगा। अंधायुग गीति-नाट्य के दो प्रहरी कहते हैं-

प्रहरी 1- युद्ध हो या शांति हो
प्रहरी2- रक्तपात होता है
प्रहरी 1- अस्त्र रहेंगे तो
प्रहरी 2- उपयोग में आयेंगे ही
प्रहरी 1- अब तक वे अस्त्र
प्रहरी 2- दूसरों के लिए उठते थे

प्रहरी 1- अब वे अपने ही विरुद्ध काम आयेंगे

प्रहरी 2- यह जो हमारे अस्त्र अब तक निरर्थक थे

प्रहरी 1- कम से कम उनका

प्रहरी 2- आज कुछ तो उपयोग हुआ। (भारती 2023:89)

इसी तरह अंधायुग गीति-नाट्य में पांडव-कौरवों के भीषण युद्ध में पांडवों की जीत हुई, युधिष्ठिर का राज्याभिषेक किया, फिर भी मार-काट, हिंसा, रक्तपात, अत्याचार आदि घटनाएँ जारी रही। युधिष्ठिर ने असंतुष्टि प्रकट करते हुए कहा-

ऐसे भयानक महायुद्ध को

अर्द्धसत्य, रक्तपात, हिंसा से जीत कर

अपने को बिलकुल हारा हुआ अनुभव कर

यह भी यातना ही है..... (भारती 2023:85)

इससे युधिष्ठिर के पछतावे के बारे में स्पष्ट संकेत मिलता है। युधिष्ठिर की तरह गांधारी को भी श्रीकृष्ण को शाप देने के बाद पछतावा हुआ था। आज भी ऐसी अनेक घटनाएँ तथा असहज परिस्थितियाँ हो जाने के बाद लोग केवल उस घटना को लेकर सहनुभूति प्रकट कर अपना दायित्व खत्म कर देते हैं। इस बात की सत्यता जगजाहिर है।

अंत में धर्मवीर भारती ने एक वृद्ध के माध्यम से इन समस्याओं का जड़ उखाड़ फेंककर मानव कल्याण तथा सुखद भविष्य की चिंता-चर्चा की है। जो इस प्रकार है-

क्या कोई सुनेगा

जो अंधा नहीं है, और विकृत नहीं है, और

मानव-भविष्य को बचायेगा? (भारती 2023:107)

इसी प्रश्नवाचक वाक्य से धर्मवीर भारती के अंधायुग गीति-नाट्य उद्देश्य प्रतिफलित होता है।

निष्कर्षः

उपरोक्त तत्त्वात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि धर्मवीर भारती का 'अंधायुग' एक सफल प्रासंगिक गीति-नाट्य है। इस गीति-नाट्य के माध्यम से महाभारत कालीन परिस्थिति की ओर संकेत करते हुए वर्तमान समाज में इसकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला है। साथ ही तुष्टीकरण की नीति के विरुद्ध ध्यानाकर्षण किया है। समाज में मानव मूल्य की स्थापना करते हुए मानव के भविष्य की सुरक्षा और सुनिश्चित दायित्वबोध इस गीति-नाट्य की सबसे बड़ी उपलब्धियाँ हैं।

ग्रंथसूची :

भारती, धर्मवीर. अंधायुग . नई दिल्ली : किताब महल प्रकाशन , 2023.

*****

संपर्क सूत्र :

डॉ॰ सिराजुल हक,सहायक आचार्य

हिंदी विभाग,बंगाईगाँव कॉलेज,बंगाईगाँव-783380

चलभाष-7598608859

ई-मेल-shirazulhoque354@gmail.com